# 1. मैथिलीशरण गुप्त

आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रतिनिधि, भारतीय संस्कृति के अमर गायक तथा राष्ट्रकवि के रूप में विख्यात मैथिलीशरण गुप्त का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जिले के चिरगाँव में सन 1886 में और निधन 1965 में हुआ। उनके पिता का नाम सेठ रामचरण गुप्त था, जो रामभक्त होने के साथ–साथ एक अच्छे कवि भी थे। वे 'कनकलता' उपनाम से कविता लिखा करते थे। अतः मैथिलीशरण गुप्त को काव्य लिखने की प्रेरणा पिता से ही मिली। बचपन में लिखी कविता को पढ़कर पिता ने पुत्र को आशीर्वाद देते हुए कहा था कि, 'तू आगे चलकर हमसे हजार गुनी अच्छी कविता करेगा।' पिता द्वारा मिला यह आशीर्वाद आगे जाकर सही साबित हुआ। परिणाम स्वरूप मैथिलीशरण गुप्त को आधुनिक हिंदी काव्य के एक मेधावी एवं प्रसिद्ध कवि के रूप में प्रसिद्धि मिली।

मैथिलीशरण गुप्त की प्रारंभिक शिक्षा गाँव में ही हुई। उसके पश्चात उन्हें झाँसी के मैकडानल हाईस्कूल में प्रवेश दिया गया। इनका मूल नाम 'मिथिलाधिपनंदिनीशरण' था। निकटस्थ लोग उन्हें दद्दा नाम से पुकारते थे। मुंशी अजमेरी के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त को काव्य की बारीकियों का परिचय हुआ। उनकी प्रारंभिक रचनाएं कोलकाता से प्रकाशित हुआ करती थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी उनके साहित्यिक गुरु थे। उनके प्रोत्साहन से गुप्त जी की काव्य कला दिन–ब–दिन विकसित होती गई। आपकी खड़ीबोली की कविताएँ सरस्वती पत्रिका में द्विवेदी के संपादन काल तक बराबर निकलती रही। मैथिलीशरण गुप्त ने हिंदी कविता के क्षेत्र में खड़ीबोली को परिनिष्ठित एवं परिमार्जित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। उनकी कविताओं में राष्ट्रप्रेम एवं देशभक्ति की भावना सर्वोपरि है। गुप्त जी मातृभूमि को केवल भूमि खंड ही नहीं बल्कि 'सगुण मूर्ति सर्वेश की' मानते हुए कहते हैं–

**"नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है,**
**सूर्य–चंद्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है।**
**नदियां प्रेम–प्रवाह, फूल तारे मण्डन है,**
**बन्दीजन खगवृन्द, शेष–फन सिंहासन हैं।**
**करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की,**
**हे मातृभूमि ! तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की।।"**



Scanned by CamScanner

इसके साथ–साथ भारतीय जीवन को समग्रता के साथ समझने का और प्रस्तुत करने का भी इन्होंने प्रयास किया है। स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने से इन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा। महात्मा गांधी की विचारधारा से प्रभावित मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय चेतना के अग्रदूत माने जाते हैं। देश प्रेम, राष्ट्रभक्ति की तीव्रता, श्रम की मूल्य के रूप में स्थापना, स्वदेश प्रेम, भारतीय संस्कृति एवं अतीत का गौरवगान, उपेक्षित स्त्रियों का नायकत्व, धार्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं राजनीतिक जागरण, काव्यात्मकता, गीतात्मकता, नाटकीयता आदि इनके काव्य की विशेषताएँ हैं। इनकी रचनाओं में इतिवृतात्मकता एवं वर्णनात्मकता का पुट अधिक मात्रा में दिखाई देता है।

विविध गुणों से युक्त व्यक्तित्ववाले मैथिलीशरण गुप्त जी राम भक्तों के साथ–साथ अन्य देवी–देवताओं एवं महान व्यक्तियों के चरित्र के प्रकाशक भी थे। मैथिलीशरण गुप्त जी में कालानुसरण की अद्‌भुत क्षमता है और यही उनकी कला की विशेषता भी है। इन्होंने युग की उत्तरोत्तर बदलती हुई भावनाओं और काव्य प्रणालियों को ग्रहण करने की अपनी अद्वितीय क्षमता का परिचय दिया है। इस दृष्टि से गुप्त जी निसंदेह हिंदी के प्रतिनिधि कवि ठहरते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के शब्दों में कहना हो, तो ''गुप्त जी वास्तव में सामंजस्यवादी कवि हैं, प्रतिक्रिया का प्रदर्शन करनेवाले अथवा मद में झूमनेवाले कवि नहीं। सब प्रकार की उच्चता से प्रभावित होनेवाला हृदय उन्हें प्राप्त है। प्राचीन के प्रति पूज्य भाव तथा नवीन के प्रति उत्साह, दोनों इनमें हैं।'' अतः हमें गुप्त जी में राष्ट्रप्रेम, मानवतावादी चिंतन की व्यापकता और गहराई के दर्शन होते हैं।

**पुरस्कार–** मैथिलीशरण गुप्त के साहित्यिक योगदान को देखते हुए इन्हें 1957 में 'साकेत' महाकाव्य पर मंगला प्रसाद पुरस्कार से, 1946 में हिंदी साहित्य सम्मेलन में साहित्य वाचस्पति की उपाधि से सम्मानित किया गया, तो सन् 1948 में आगरा विश्वविद्यालय की ओर से डिलीट की मानक उपाधि से सम्मानित किया गया। भारत सरकार में आप राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे हैं।

**रचनाएँ–** हिंदी जगत और हिंदुओं में मैथिलीशरण गुप्त को प्रसिद्धि देनेवाली रचना 'भारत भारती' है। इसमें हिंदुओं के अतीत गौरव और वैभव की अपेक्षा वर्तमान समय की हीन दशा का वर्णन करके हिंदू जनता को जागृत करने का प्रयास किया गया है। इस रचना के अलावा 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वध', 'विकट भट', 'प्लासी का युद्ध', 'गुरुकुल', 'किसान', 'पंचवटी', 'सिद्धराज', 'साकेत' और 'यशोधरा' इनके प्रबंध काव्य हैं। 'जयद्रत वध' और 'पंचवटी' को साहित्य क्षेत्र में काफी सम्मान मिला, तो 'साकेत' और 'यशोधरा' इनकी स्थायी कीर्ति के दो आधार स्तंभ माने जाते हैं।



**अनुदित रचनाएँ–** विरहिणी–ब्रजांगना, वीरांगना, मेघनाद वध, उमर खय्याम की रुबाइयाँ, हिडिम्बा, प्लासी का युद्ध, स्वप्नवासवदत्ता आदि के साथ–साथ चन्द्रहास, अनघ और तिलोतमा पद्यमय अनूदित रचनाएं हैं।

मैथिलीशरण गुप्त की **किसान** एक चर्चित कविता है। इस कविता में गुप्त जी ने भारतीय किसानों की मेहनत और कठोर परिश्रम के बावजूद आर्थिक तंगहाली से उत्पन्न पीड़ा एवं व्यथा को प्रस्तुत किया है। भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ का किसान देश के लिए, समाज के लिए जी तोड़ मेहनत कर फसल उगाता है, लेकिन उस मेहनत का मुआवजा उसे ठीक से नहीं मिलता। किसान धूप, ठंड की परवाह किए बिना रात दिन खेत में मेहनत करता है। वह बारिश में भीगते हुए, ठंड में सिकुड़ते हुए और धूप में तपते हुए खेत में इस उम्मीद से मेहनत करता है कि अधिक से अधिक फसल उग सके। लेकिन दुर्भाग्य यह कि अच्छी फसल होकर भी किसान को उसका लाभ नहीं मिलता क्योंकि साहूकारों और महाजनों का कर्ज चुकाने में ही उसकी कमाई चली जाती है। कवि के मन में प्रश्न उठता है कि दिन–रात मेहनत करके भी अगर लाभ नहीं मिलता, तो यह किसान किस लोभ से बिना विश्राम के निरंतर अपने खेत में परिश्रम करते रहता है। ऐसा लगता है मानो उनकी अपनी एक अलग दुनिया हो। अपने आसपास क्या चल रहा है इसका उसे कोई लेन–देन नहीं रहता। एक दृष्टि से वह स्वयं भूखा रहकर समाज का पालन–पोषण करता है। यह कविता किसान की परिश्रमशील वृत्ति के साथ–साथ उसकी मानवतावादी एवं उदारतावादी दृष्टि को भी व्यक्त करती है।

■■■



Scanned by CamScanner

## किसान

हेमन्त में बहुदा घनों से पूर्ण रहता व्योम है
पावस निशाओं में तथा हँसता शरद का सोम है
हो जाये अच्छी भी फसल, पर लाभ कृषकों को कहाँ
खाते, खवाई, बीज ऋण से हैं रंगे रक्खे जहाँ
आता महाजन के यहाँ व अन्न सारा अंत में
अधपेट खाकर फिर उन्हें है काँपता हेमंत में

बरस रहा है रवि अनल, भूतल तवा सा जल रहा
है चल रहा सन सन पवन, तन से पसीना बह रहा
देखो कृषक शोषित, सुखाकर हल तथापि चला रहे
किस लोभ से इस आँच में, वे निज शरीर जला रहे

घनघोर वर्षा हो रही, है गगन गर्जन कर रहा
घर से निकलने को गरजकर, वज्र वर्जन कर रहा
तो भी कृषक मैदान में करते निरंतर काम हैं
किस लोभ से वे आज भी, लेते नहीं विश्राम हैं

बाहर निकलना मौत है, आधी अँधेरी रात है
है शीत कैसा पड़ रहा, औ थरथराट गात है
तो भी कृषक इंधन जलाकर, खेत पर है जागते
यह लाभ कैसा है, न जिसका मोह अब भी त्यागते

संप्रति कहाँ क्या हो रहा है, कुछ उसको ज्ञान है
है वायु कैसी चल रही, इसका न कुछ भी ध्यान है
मानो भुवन से भिन्न उनका, दूसरा ही लोक है
शशि सूर्य हैं फिर भी कहीं, उनमें नहीं आलोक है

■■■



Scanned by CamScanner

# 2. जयशंकर प्रसाद

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल के अंतर्गत छायावादी काव्यधारा के श्रीगणेशकर्ता जयशंकर प्रसाद एक प्रमुख कवि हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी जयशंकर प्रसाद जी का जन्म 30 जनवरी 1890 को उत्तर प्रदेश के वाराणसी में सुँघनी साहू परिवार में हुआ और उनकी मृत्यु 16 नवंबर 1937 में वाराणसी में ही हुई। प्रसाद जी के पिता का नाम देवी प्रसाद था, जो तंबाकू का व्यवसाय करते थे। बचपन से ही पिता के साथ प्रसाद जी ने अनेक तीर्थ स्थलों की यात्राएँ की है। उनकी पढ़ाई स्कूल की अपेक्षा घरपर ही अधिक हुई। उनके गुरु का नाम सोहिनीलाल जी 'रसमई सिद्ध' था। 12 वर्ष की आयु में ही वे पितृहीन हुए तथा 15 वर्ष की आयु में माता की छत्रछाया से वंचित हुए और 17 वर्ष की आयु में बडे भाई की मृत्यु हुई। पारिवारिक जिम्मेदारी के कारण 20 वर्ष की आयु में उनका पहला विवाह हुआ। उनके जीवन में पारिवारिक विपदाएँ हमेशा आती रही। कुछ ही दिनों में पहली पत्नी की मृत्यु होने से दूसरा विवाह करना पड़ा और दूसरी पत्नी की मृत्यु के बाद तीसरी पत्नी से उन्हें रत्नशंकर नामक बेटा हुआ।

जयशंकर प्रसाद का मूल नाम झारखंडी था। उन्होंने 9 वर्ष की आयु में ही 'कलाधर' उपनाम से कविता लिखना प्रारंभ किया था। उनकी पहली कहानी 'ग्राम' 1911 में इंदु पत्रिका में प्रकाशित हुई तथा 'सालवनी' नामक अंतिम कहानी 1935 में प्रकाशित हुई थी। जयशंकर प्रसाद एक कवि के साथ–साथ उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार के रूप में भी विख्यात हैं। मूलतः जयशंकर प्रसाद कवि होने के कारण उनके कथा साहित्य में भी भावनात्मकता दिखाई देती है। प्रसाद जी आरंभिक काल में ब्रज भाषा में कविता लिखा करते थे किंतु 1913–14 से उन्होंने खड़ीबोली में लिखना आरंभ किया था। 1912 में उनका काव्य 'झरना' प्रकाशित हुआ और छायावादी काव्य की प्रवृत्तियां सबसे पहले इसी रचना में प्रकट हुई है। आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन के दिनों इनकी 'आंसू' काव्य का प्रकाशन हुआ, जो छायावाद की अत्यंत प्रोढ रचना मानी जाती है। जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' रचना अंतिम किंतु सर्वश्रेष्ठ रचना है जिसे छायावाद का महाकाव्य कहा जाता है। प्रसाद जी ने इस रचना में मनु,श्रद्धा और इडा की पौराणिक कथा के माध्यम से आज के मनुष्य के बौद्धिक और भावात्मक विकास और उसके जीवन में आयी विषमताओं की



Scanned by CamScanner

जीती जागती कहानी को प्रस्तुत किया है। आज के असंगत और विडंबन भरे जीवन का चित्रण करते हुए वे कहते हैं–

**"ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है,**
**इच्छा क्यों पूरी हो मन की।**
**एक दूसरे से न मिल सके,**
**यह विडंबना है जीवन की।।"**

प्रसाद जी ने जीवन की इस यथार्थता के साथ–साथ अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के गौरवशाली अतीत को नई चेतना के साथ प्रस्तुत किया है। भारतीय इतिहास एवं संस्कृति का गौरवगान, अतीत के प्रति प्रेम, नारी स्वतंत्रता, पराधीनता से मुक्ति, प्रेम की मूल्य के रूप में प्रतिष्ठा, राष्ट्रप्रेम, करुणा, भावात्मकता, चित्रात्मकता, प्रकृति वर्णन, रहस्यवाद, प्रतीकात्मकता, व्यक्तिवाद, लाक्षणिकता आदि उनके काव्य की विशेषताएं हैं। उनकी भाषा भवानुकूल, गंभीर एवं संस्कृत प्रधान तत्सम हिंदी है।

**रचनाएँ**

**काव्य–** कानन कुसुम, महाराणा का महत्व, प्रेम पथिक, करुणालय, झरना, आँसू, लहर, कामायनी आदि प्रसिद्ध काव्य रचनाएं हैं।

**कहानी संग्रह–** छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी, इंद्रजाल ये पाँच कहानी संग्रह हैं।

**उपन्यास–** कंकाल, तितली, इरावती ये तीन उनके चर्चित उपन्यास हैं, जिनमें से इरावती अधूरा उपन्यास है।

**नाटक–** स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, अजातशत्रु, विशाख, राज्यश्री, एक घूँट आदि उनके चर्चित नाटक हैं।

जयशंकर प्रसाद की **'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से'** यह कविता भारतीय संस्कृति और इतिहास की गौरवमई गाथा को अभिव्यक्त करती है। इस कविता के माध्यम से जयशंकर प्रसाद जी ने भारतभूमिका प्राकृतिक और ऐतिहासिक गौरवगान करते हुए अतीत के शूरवीरों के बलिदानों का एवं उनके शौर्य का वर्णन किया है। कविता के माध्यम से कवि ने युवकों में शूरवीरों के बलिदानों के प्रति राष्ट्रप्रेम का भाव भरने का प्रयास किया है। यह कविता आज के मनुष्य एवं युवकों को विजयपथ की ओर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करती है। प्राकृतिक सौंदर्य, देश की संस्कृति का गौरवगान और भारतीय शूरवीरों के बलिदानों एवं शौर्य का वर्णन इस कविता की विशेषताएं है।



## हिमाद्रि तुंग श्रृंग से

हिमाद्रि तुङ्ग श्रङ्ग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला
स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

असंख्य कीर्ति – रश्मियाँ
विकीर्ण दिव्य दाह – सी।।
सपूत मातृभूमि के
रुको न शूर साहसी !

अराति सैन्य सिंधु में – सुवाड्वाग्नि–से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो – बढ़े चलो, बढ़े चलो !



Scanned by CamScanner

# 3. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

आधुनिक काल के कवियों में चर्चित कवि, लेखक, अच्छे वक्ता और प्रभावशाली नेता के रूप में विख्यात तथा प्रतिभा के धनी बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जी का जन्म 1897 ई. में पंडित जमनादास शर्मा के घर में हुआ और उनका निधन दिल्ली में 1960 को हुआ। नवीन जी का बचपन नाथ द्वारा में बीता था। उन्होंने आगरा से माध्यमिक परीक्षा पास की और 1917 में हाईस्कूल की परीक्षा पास कर कानपुर में क्राइस्ट चर्च कॉलेज में प्रवेश लिया। इससे पूर्व 1916 ई. में ही लखनऊ के कांग्रेस अधिवेशन में उनकी मुलाकात माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त और गणेश शंकर विद्यार्थी से हुई थी। उनके साथ असहयोग आंदोलन में भाग लेने से उनका अध्ययन बीच में छूट गया। इतना ही नहीं इस आंदोलन से जुड़ने के कारण उन्हें दो वर्ष का कारावास भी भुगतना पड़ा। उसके पश्चात उन्होंने राजनीति में प्रवेश किया और कानपुर को अपना कार्यक्षेत्र बना दिया।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जी की कविताओं पर राष्ट्रीय आंदोलनों, सामाजिक घात–प्रतिघातों, दार्शनिक अनुभूतियों तथा स्वच्छंदतावादी काव्य एवं प्रगतिवाद का प्रभाव पड़ा हुआ दिखाई देता हैं लेकिन हिंदी साहित्य जगत में क्रांतिकारी कवि के रूप में ही इन्हें अधिक प्रतिष्ठा मिली है। आरंभ में इनके काव्य में छायावादी काव्य की प्रवृतियां दिखाई देती थी लेकिन वह आगे विकसित न हो पाई। इनका व्यक्तिवादी विचार आगे जाकर अपने गीतों के माध्यम से राष्ट्रीयता के पथपर अग्रसर होता हुआ दिखाई देता है। जैसे –

**"मैं हूँ भारत के भविष्य का**
**मूर्तिमान विश्वास महान्**
**मैं हूँ अटल हिमाचल सम थिर**
**मैं हूँ मूर्तिमान बलिदान।"**

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के गीतों में राष्ट्रीयता के साथ–साथ क्रांति की भावना, युग परिवर्तन और प्रणय की झंकार स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। राष्ट्रप्रेम, क्रांति में विश्वास, प्रगतिवादी विचार, गांधीवादी दर्शन, स्वछन्दता, करुणा, तीव्र भावात्मकता, गेयात्मकता आदि उनकी काव्यगत विशेषताएँ हैं। इनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ–साथ ब्रज, मालवी और उर्दू के शब्द भी पाए जाते हैं। इनकी भाषा–शैली में स्वतंत्रता और गीतों में विविधता



दिखाई देती है। इनकी प्रारंभिक कविताएं ब्रजभाषा में थी और बाद में उन्होंने खड़ीबोली को काव्य–भाषा के रूप में अपनाया है।

**रचनाएँ**– कुंकुम, अपलक, रश्मि–रेखा, क्वासि, विनोवा–स्तवन, उर्मिला, प्राणार्पण और हम विषपाई जन्म आदि इनकी चर्चित रचनाएँ हैं। इनमें से अंतिम दो रचनाएँ मृत्युपरांत प्रकाशित हुई थी। 'कुंकुम' के गीतों में राष्ट्रीयता, गांधीवाद और प्रगतिवाद का प्रभाव दिखाई देता है तथा 'पलक', 'रश्मि–रेखा' और 'क्वासि' के गीतों में क्रांति एवं विप्लव का स्वर बड़ी तीव्रता के साथ मुखरित हुआ है। इसमें सामान्य मनुष्य की दयनीय दशा को देखकर कवि की वाणी क्रांति के लिए मचल उठती है। 'विनोबा–स्तवन' में संत विनोबा भावे के प्रति कवि ने श्रद्धांजलि अर्पित की है। 'उर्मिला' और 'प्राणार्पण' नवीन जी के प्रबंध और खंडकाव्य हैं।

**'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ'** बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की क्रान्ति की भावना से ओतप्रोत एक चर्चित कविता है। इस कविता के माध्यम से कवि ने भारतीयों को अंग्रेजी शासन से मुक्ति पाने का आह्वान किया है। अंग्रेजों की शोषण की वृत्ति तथा देश की गुलामी को लेकर कवि के मन में विद्रोह की भावना थी और यही भावना कविता के माध्यम से आक्रोश के रूप में व्यक्त हुई है।

इस कविता के माध्यम से कवि क्रांति की बात करना चाहते हैं। उन्हें क्रांति में विश्वास है क्योंकि क्रांति और उत्क्रांति में अंतर होता है। उत्क्रांति धीरे–धीरे होती है और क्रांति तीव्र गति के साथ परिवर्तन लाती है। आतः अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त होना है,तो क्रांति की आवश्यकता है उत्क्रांति की नहीं। कवि के अनुसार क्रांति और उत्क्रांति की मंजिल भले ही एक हो लेकिन दोनों के रास्ते अलग–अलग होते हैं।

कवि यहाँ कहना चाहता है कि क्रांति के बाद नव निर्माण होता है, जो कुछ गलत है, बुरा है तथा असगत है उसे समाप्त होना ही चाहिए। अपनी इस कविता के माध्यम से कवि पाठकों को क्रांति के लिए प्रेरित करना चाहता है ताकि भारतभूमि विदेशी शासन से मुक्त हो जाए। यह कैंविता देश की भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ तथा गुलामी के खिलाफ लड़ने के लिए यवकों को प्रेरित कर उनमें सच्चा ' के पक्ष में खडे होने का उत्साह भरती है।



Scanned by CamScanner

## कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ

कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ– जिससे उथल–पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए– एक हिलोर उधर से आए;
प्राणों के लाले पड़ जाएँ त्राहि–त्राहि स्वर नभ में छाए।
नाश और सत्यानाशों का धुआँधार जग में छा जाए।;
बरसे आग, जलद जल जाएँ, भस्मसात् भूधर हो जाए।
पाप–पुण्य सदसद्भावों की धूल उड़ उठे दाएँ– बाएँ;
नभ का वक्षःस्थल फट जाए, तारे टूक–टूक हो जाएँ,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ– जिससे उथल–पुथल मच जाए।

माता की छाती का अमृत–मय पय काल कूट हो जाए,
आँखों का पानी सूखे, हाँ, वह खून की घूँट हो जाए;
एक और कायरता काँपे, गतानुगति विगलित हो जाए;
अंधे मूढ़ विचारों की वह अचल शिला विचलित हो जाए;
और दूसरी ओर कँपा देनेवाला गर्जन उठ धाए;
अन्तरिक्ष में एक उसी नाशक तर्जन की ध्वनि मंडराए;
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ– जिससे उथल–पुथल मच जाए।

नियम और उपनियमों के ये बन्धन टूक–टूक हो जाएँ;
विश्वम्भर की पोषक वीणा के सब तार मूक हो जाएँ;
शान्ति– दंड टूटे,– उस महारुद्र का सिंहासन थर्राए,
उसकी पोषक श्वाससोच्छवास विश्व के प्रांगण में घहराए–
नाश ! नाश ! हाँ, महानाश की प्रलयंकारी आँख खुल जाए,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ– जिससे उथल–पुथल मच जाए।

सावधान ! मेरी वीणा में चिनगारियाँ आन बैठी हैं,
टूटी हैं मिजराबें युगलांगुलियाँ ये मेरी ऐंठी हैं;
कंठ रुका जाता है, महानाश का गीत रुद्ध होता है;
आग लगेगी क्षण में ह्रत्तल में अब क्षुब्ध युद्ध होता है;
झाड़ और झंखाड व्याप्त है– इस ज्वलंत गायन के स्वर से;
रुद्ध गीत की क्षुब्ध तान निकली है मेरे अन्तर–तर से।



कण–कण में है व्याप्त वह स्वर, रोम–रोम गाता है वह ध्वनि;
वही तान गाती रहती है, काल–कूट फणि की चिन्तामणि;
जीवन–ज्योति लुप्त है– अहा ! गुप्त हैं संरक्षण की घड़ियाँ;
लटक रही हैं प्रतिपल में– इस नाशक सम्भक्षण की लड़ियाँ;
चकनाचूर करो जग को– गूँजे ब्रह्मांड नाश के स्वर से;
रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अन्तर– तर से।

दिये को मसल– मसल मेहंदी रचता आया हूँ, मैं यह देखो;
एक–एक अंगुली–परिचालन में नाशक तांडव को पेखो;
विश्व–मूर्ति ! हट जाओ– यह बीभत्स प्रहार सहे न सहेगा;
टुकड़े–टुकड़े हो जाओगी, नाश–मात्र अवशेष रहेगा;
आज देख आया हूँ, जीवन के सब राज समझ आया हूँ,
भ्रू–विलास में महानाश के पोषक सूत्र परख आया हूँ,
जीवन–गीत भुला दो – कंठ मिला दो – मृत्यु–गीत के स्वर से,
रुद्ध–गीत की क्रुध्द तान निकली है मेरे अन्तर–तर से।

■■■



Scanned by CamScanner

# 4. अज्ञेय

आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में प्रयोगवादी काव्यधारा के प्रवर्तक कवि 'अज्ञेय' का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के प्रसिद्ध बौद्ध स्थल कसया के पास 1911 में और निधन 1987 को दिल्ली में हुआ। उनके पिता का नाम हीरानन्द शास्त्री था, जो भारत सरकार के पुरातत्व विभाग में अधिकारी थे। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' था। अज्ञेय की मैट्रिक तक की शिक्षा घरपर हुई। उन्होंने इंटरमीडिएट मद्रास से किया तत्पश्चात बीएससी करके वे क्रांतिकारी संगठन में शामिल हुए। उन्हें पकड़ने के लिए पुलिस ने 500 रु. का इनाम भी घोषित किया था और वे अमृतसर में पकड़े गए। तत्पश्चात वे आजाद हिंद फौज में शामिल हो गए।

जैसा 'अज्ञेय' का जीवन वैविध्य पूर्ण है, वैसा ही इनका साहित्य भी। इन्होंने कहानी, उपन्यास, कविता, निबंध तथा आलोचना जैसी विविध विधाओं पर लेखनी चलाकर हिंदी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने देश–विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में अतिथि अध्यापक के रूप में अध्यापन का कार्य भी किया है। अतः इनके साहित्यिक योगदान को देखते हुए इन्हें साहित्य अकादमी तथा भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया।

अज्ञेय सच्चे अर्थों में चिंतक और बहुआयामी व्यक्तित्व के साहित्यकार थे। उन्होंने नये विषय, नई भाषा, नई शैली, नये उपमान, नये छंद, नई अभिव्यक्ति, नई दृष्टि एवं नई सोच से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। वे हिंदी साहित्य में प्रयोगवादी काव्यधारा के प्रवर्तक एवं प्रनेता के रूप में पहचाने जाते हैं। उन्होंने 'तार सप्तक' के रूप में प्रयोगवादी कविता को जन्म दिया। वे कला को नैतिकता के साथ जोड़ते हैं। कला की नैतिकता के बारे में उन्होंने कहा भी है कि, "कला संपूर्णता की ओर जाने का प्रयास है, व्यक्ति की अपने को सिद्ध प्रमाणित करने की चेष्टा है, वह एक प्रकार का आत्मदान है, जिसके द्वारा व्यक्ति का अहं अपने को अक्षुण्ण रखना चाहता है। सच्ची कला कभी भी अनैतिक नहीं हो सकती। वह अंततः एक नैतिक मान्यता पर आश्रित है।" आधुनिक भावबोध को अभिव्यक्त करनेवाले सुंदर बिंब और प्रतीक उनके काव्य में पाए जाते हैं। रचनात्मकता, चिंतनशीलता, प्रेमानुभूति, भोगवाद, क्षणवाद, वैयक्तिकता, प्रकृति वर्णन, आत्मबोध, प्रतीकात्मकता, बिंबात्मकता, आधुनिकता



आदि उनके काव्य की विशेषताएं हैं। अज्ञेय ने हिंदी कविता को नए भावबोध, नई शैली, नए उपमान और नई दृष्टि प्रदान की है।

**रचनाएँ**

**काव्यसंग्रह–** भग्नदूत, चिन्ता, इत्यलम्, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, आंगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, इंद्र धनु रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, आंगन के पार द्वार तथा सुनहरे शैवाल आदि उनके काव्य संग्रह हैं। इनमें से 'आंगन के पार द्वार' को साहित्य अकादमी पुरस्कार, तो 'कितनी नावों में कितनी बार' को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है।

**कहानी संग्रह–** त्रिपथगा, शरणार्थी, परंपरा, कोठरी की बात, जयदोल आदि इनके चर्चित कहानी संग्रह हैं।

**उपन्यास–** शेखर एक जीवनी (भाग 1,2), नदी के द्वीप, अपने अपने अजनबी ये उपन्यास हैं।

**निबंध–** त्रिशंकु, सबरंग, भवंति आदि।

**आलोचना ग्रंथ–** एक बूंद सहसा उछली, अरे यायावर रहेगा याद, यात्रावृतांत, संस्मरण, स्मृतिलेखा, आत्मनेपद, आद्दतन आदि आलोचनात्मक ग्रंथ हैं।

**'नदी के द्वीप'** यह कविता 'हरी घास पर क्षण भर' इस कविता संग्रह से ली गई है। यह अज्ञेय की व्यक्तित्व विशेष धारणा का परिचय देनेवाली कविता है। इस कविता में नदी के द्वीप को एक प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें कवि नदी को माता, भूखंड को पितर तथा स्वयं को नदी का द्वीप (पुत्र) मानता है। कवि ने यहाँ व्यष्टि का समष्टि के साथ संबंध स्थापित करने का प्रयास किया है। इस कविता में नदी समष्टि (समाज) है, तो भूखंड व्यष्टि (मनुष्य) है। समाज ही व्यक्ति के व्यक्तित्व को आकार देता है।

इस कविता में कवि ने विशिष्ट व्यक्तित्व और व्यापक जीवन से अनवरत समबद्ध होने के भाव को एक दूसरे से जोड़ने का प्रयत्न किया है। कवि के अनुसार नदी के प्रवाह में छोटे–छोटे भूखंड होते हैं। उसके चारों ओर जल भरा हुआ होता है लेकिन भूखंड कभी बहते नहीं अपितु उसका नदी के प्रति समर्पण होता है। अज्ञेय ने इस कविता में मनुष्य के अस्तित्व को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार नदी के द्वीप नदी के कारण ही होते हैं लेकिन वे नदी जैसे नहीं होते। अगर किसी कारणवश बाढ़ आ जाए, तो उसका अस्तित्व नष्ट हो जाता है लेकिन फिरसे खड़े रहने की आशा उसमें होती है। कवि की दृष्टि से समाज में मनुष्य की स्थिति द्वीप की तरह ही होती है। किसी भी विपदाओं में बहना नष्ट हो जाना है और बहकर भी खड़े रहना मनुष्य की नियति है। मनुष्य संघर्ष करते हुए गिरकर भी पुनः खड़ा होता है यही इस कविता के माध्यम से कवि ने बताने का प्रयास किया है।



Scanned by CamScanner

## नदी के द्वीप

(1)

हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर स्त्रोतस्विनी बह जाए।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतद्वीप, उभार, सैकत–कुल
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।
माँ है वह ! इसी से हम बने हैं।

(2)

किंतु हम हैं द्वीप।
हम धारा नहीं हैं।
स्थीर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्त्रोतस्विनी के।
किंतु हम बहते नहीं हैं। क्योंकि बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।
पैर उखड़ेंगे। प्लावन होगा। ढहेंगे। सहेंगे। बह जाएँगे।
और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी क्या धार बन सकते ?
रेत बनकर हम सलील को तनिक गँदला ही करेंगे।
अनुपयोगी ही बनाएँगे।

(3)

द्वीप हैं हम !
यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी की क्रोड में।
वह बृहत भूखंड से हमको मिलाती है।
और वह भूखंड
अपना पितर है।



(4)

नदी ! तुम बहती चलो।
भूखंड़ से जो दाए हमको मिला है, मिलता रहा है,
माँजती, संस्कार देती चलो।
यदि ऐसा कभी हो–
तुम्हारे आल्हाद से या दूसरां के,
किसी स्वैराचार से,
अतिचार से,
तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे–
यह स्त्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा घोर
काल, प्रवाहिनी बन जाए–
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में रेत होकर।
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नए व्यक्तित्व का आकार।
माता ! उसे फिर संस्कार तुम देना।

■■■



Scanned by CamScanner

# 5. नागार्जुन

प्रगतिशील चेतना के प्रतिभा संपन्न कवि नागार्जुन एक सफल पत्रकार, उपन्यासकार, कवि और समीक्षक हैं। इनका जन्म बिहार प्रांत के दरभंगा जिले के सतलखा गाँव में 1911 को हुआ। उनके पिता का नाम गोकुल सिंह और मां का नाम उमादेवी था। पिता किसानी के साथ–साथ पुरोहित का भी काम करते थे। माता–पिता ने उनका नाम वैद्यनाथ रखा था और वे प्यार से उन्हें ठक्कन भी कहा करते थे। पाँच साल की उम्र में ही नागार्जुन की माता का देहांत हुआ जिससे उनका पालन–पोषण उनकी चाची ने किया। नागार्जुन की प्रारंभिक शिक्षा तरौनी गाँव में हुई और आगे की पढ़ाई उन्होंने वाराणसी संस्कृति विद्यालय तथा कोलकत्ता से की। उनका बचपन अभाव और असुविधाओं में बीता। 1929 में उनका विवाह अपराजिता देवी के साथ हुआ।

नागार्जुन ने श्रीलंका में बौद्ध धर्म की दीक्षा ली और तत्पश्चात ही उन्होंने 'नागार्जुन' यह नाम धारण कर हिन्दी साहित्य की सेवा में लग गये। ज्ञानार्जन की लालसा ने इन्हें घुमक्कड प्रवृत्तिवाला बना दिया। सांसारिक मोह माया से दूर रहना, यायावरी और फक्कड़पन इनके व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं। इनपर साम्यवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है और वे साम्यवादी पार्टी के सक्रिय सदस्य भी रह चुके हैं। पार्टी संबंधी राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने के कारण कई बार इन्हें जेल भी जाना पड़ा।

नागार्जुन गद्य और पद्य दोनों विधाओं पर समान अधिकार रखनेवाले प्रगतिवादी विचारधारा के रचनाकार हैं। सहजता उनके काव्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता होकर उनका काव्य लोकोत्तर और यथार्थ अनुभव से अनुप्राणित है। सामान्यतः उन्होंने स्वाधीन भारत के निर्धन वर्ग की पीड़ा को तथा शोषित किसान को अपनी कविताओं का विषय बनाया है। आम आदमी के अभाव, शोषण की पीड़ा और उनके संघर्ष की गाथा से प्रणित इनकी कविताएं जनसामान्य में क्रांति का शंखनाद करती है। इनकी भाषा में यथार्थ की अनुभूति और सच्चाई है।

जहाँ एक ओर शोषित वर्ग अभाव की खाई में गिर रहा है, श्रमिक भरपेट भोजन नहीं जुटा पा रहा है, वहाँ उच्च वर्ग भोग विलास में पानी की तरह धन बहा रहा है। आज लोग किस प्रकार नकली मुखौटा धारण किए दोहरी जिंदगी व्यतीत कर रहे हैं, ऐसे लोगों पर प्रहार करते हुए कवि कहते हैं–



**"जमींदार है, साहूकार है, बनिया है, व्यापारी है।**
**अंदर–अंदर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी है।"**

यह व्यंग्यात्मक शैली की क्षमता समकालीन कवियों से नागार्जुन की अलग पहचान बनाती है। प्रगतिवादी दृष्टि, सामाजिक शोषण का चित्रण, कुरीतियों के प्रति विद्रोह, आम आदमी का संघर्ष, गरीबी का चित्रण, विसंगतिपूर्ण जीवन, भाषा की सहजता, व्यंग्यात्मकता आदि नागार्जुन की रचनाओं की विशेषताएं हैं। इन्होंने दीपक (हिंदी मासिक), (विश्वबंधु) हिंदी साप्ताहिक) पत्रिकाओं का संपादन भी किया है।

## रचनाएँ

**उपन्यास–** रतिनाथ की चाची, बाबा बटेसरनाथ, बलचनमा, कुंभी पाक, वरुण के बेटे, दुखमोचन, नई पौध, उग्रतारा आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

**कहानी–** आसमान में चंदा तेरे।

**अनुवाद–** मेघदूत, गीतगोविन्द, विद्यापति के सौ गीत आदि अनूदित रचनाएं हैं।

**काव्य संग्रह–** युगधारा, प्रेत का बयान, सतरंगे पंखों वाली, प्यासी पथराई आँखें, तालाब की मछलियाँ, तुमने कहा था, चंदन, पुरानी जूतियों का कोरस, हजार–हजार बाहोंवाली, भस्मांकुर, चित्रा, पत्रहीन नग्न गाछ आदि उनके चर्चित काव्य संग्रह हैं।

**'प्रेत का बयान'** यह यथार्थवादी कविता है। प्रस्तुत कविता प्रतीकात्मक है, जो समूचे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। इस कविता में कवि ने स्वतंत्र भारत के एक ऐसे अध्यापक की व्यथा का चित्रण किया है जिसकी मृत्यु पेंशन न मिलने के कारण भुखमरी से होती है। इस प्रसंग को कवि ने यमलोक के रूपक के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। जनता की गरीबी, भुखमरी और इसको लेकर शासन की लापरवाही, साथ–ही–साथ वास्तविकता को छुपाने के लिए आर्थिक प्रगति के झूठे आंकड़ों को प्रस्तुत करना, आम आदमी का सही न मानना, शासन का आतंक इन सभी पर कवि ने फंतासी, मिथक और विडंबना का प्रयोग कर प्रहार किया है।

कविता में चित्रित प्राइमरी स्कूल का अध्यापक मृत्यु के पश्चात भी यह कहने से डरता है कि उसकी मृत्यु भूख से हुई है या देश में भुखमरी की स्थिति है। यमराज के सामने स्वाधीन भारत के एक प्राइमरी स्कूल के अध्यापक के प्रेत का यह बयान है। यह कविता देश के निर्माता अध्यापक की पेंशन के अभाव में हुई मृत्यु और उसपर शासन की लापरवाही, अराजकता और आतंक को लेकर सोचने के लिए पाठक को विवश करती है। इस कविता के माध्यम से स्वाधीन भारत में 'गरीबी हटाओ' की दुहाई देने वालों पर तीखा व्यंग्यात्मक प्रहार भी किया गया है।



Scanned by CamScanner

## प्रेत का बयान

औ रे प्रेत
कड़ककर बोले नरक के मालिक यमराज
सच–सच बतला!
कैसे मरा तू ?
भूख से, अकाल से ?
बुखार, कालाजार से ?
पेचिश, बदहजमी प्लेग माहमारी से ?
कैसे मरा तू, सच सच बतला!
खड़ खड़ खड़ खड़ हड हड हड हड
काँपा कुछ हाडों का मानवीय ढाँचा
नचाकर लंबी चमचों-सा पंचगुरा हाथ
रूखी – पतली किट – किट आवाज में
प्रेत ने जवाब दिया।
"महाराज।
सच सच कहूँगा
झूठ नहीं बोलुँगा
नागरिक हैं हम स्वाधीन भारत के...
पूर्णिया जिला है सूबा बिहार के सिवान पर
थाना धमदाहा
बस्ती रूपउली
जाति का कायस्थ
उमर है लगभग पचपन साल की
पेशा से प्राइमरी स्कूल का मास्टर था
तनखा थी तीस रुपए, सो भी नहीं मिली
मुश्किल से काटे हैं
एक नहीं, दो नहीं नौ–नौ महीने
घरनी थी, माँ थी, बच्चे थे चार
आ चुके हैं वे भी दयासागर, करुणा के अवतार
आप ही की छाया में।
मैं ही था बाकी
क्योंकि कर्मों की पत्तियाँ अभी कुछ शेष थी
हमारे अपने पुश्तैनी पोखर में
मनोबल शेष या सूखे शरीर में... "अरे वाह"
भभाकर हँस पड़ा नरक का राजा
दमक उठी झालरें कम्पमान सिर के मुकुट की



फर्श पर ठोककर सुनहला लौह दंड
अविश्वास की हँसी हँसा दंडपानी महाकाल
'बड़े अच्छे मास्टर हो।
आए हो मुझको भी पढ़ाने
मैं भी बच्चा हूँ...
वाह भाई वाह !
तो तुम भूख से नहीं मरे ?'
हद से ज्यादा डालकर जोर
होकर कठोर
प्रेत फिर बोला
आचरण की बात है
यकीन नहीं करते आप क्यों मेरा
कीजिए न कीजिए, न आप चाहे विश्वास
साक्षी है धरती, साक्षी है आकाश
और और और और और भले
नाना प्रकार की व्याधियाँ हो भारत में
किंतु... उठाकर दोनों बाँह
किट – किट करने लगा जोरों से प्रेत
"किंतु भूख या क्षुधा नाम हो जिसका
ऐसी किसी व्याधि का पता नहीं हमको
सावधान महाराज,
नाम नहीं लीजिएगा
हमारे समक्ष फिर किसी भूख का।"
निकल गया भाप आवेग का
तदनंतर शांत–स्तंभित स्वर में प्रेत बोला
'जहाँ तक मेरा अपना सम्बन्ध है।
सुनिए महाराज,
तनिक भी पीर नहीं
दुख नहीं, दुविधा नहीं
सरलता पूर्वक निकले थे प्राण
सह न सकी आँत जब पेचिश का हमला
सुनकर दहाड़
स्वाधीन भारतीय प्राइमरी स्कूल के
भुखमरे स्वाभिमानी सुशिक्षक प्रेत की
रह गए निरुत्तर
महामहिम नरकेश्वर।'

■■■



Scanned by CamScanner

# 6. त्रिलोचन

हिंदी की आधुनिक प्रगतिशील कविता के सशक्त हस्ताक्षर तथा भाषा के प्रति सजग एवं प्रयोगशील मेधावी कवि त्रिलोचन का जन्म 20 अगस्त 1917 ईस्वी में उत्तर प्रदेश के सुलतानपुर जिले के कटघरा चिरानीपट्टी में जगरदेवसिंह के घर में हुआ और 9 दिसम्बर 2007 को गाजियाबाद में उनका निधन हुआ। उन्होंने अपनी औपचारिक शिक्षा एम.ए.तक (हिंदी तथा अंग्रेजी) काशी हिंदू विश्वविद्यालय से की और लाहौर से संस्कृत में शास्त्री की उपाधि प्राप्त की थी। बावजूद इसीके अनौपचारिक रूप से उन्होंने मराठी, गुजराती, बंगला, संस्कृत, फारसी आदि भाषाओं का गहन अध्ययन किया था।

हिंदी में त्रिलोचन की पीढ़ी के ही नहीं बाद की पीढ़ी के कवियों में बहुत कम ऐसे कवि हैं जिन्हें अपनी परंपरा का इतना गहरा एवं व्यापक ज्ञान था। जिस प्रकार तुलसी ने अपने लिए नई भाषा अविष्कृत की थी, यही उनकी शक्ति थी ठीक उसी प्रकार त्रिलोचन भी भाषा की इसी अभिव्यक्ति शक्ति को पहचानकर नये भाषा प्रयोग करते हैं। उन्होंने हिंदी में प्रयोग धर्मिता का समर्थन किया है। उनका कहना था कि, "भाषा में जितने प्रयोग होंगे उतनी व समृद्ध होगी।" उन्होंने हमेशा नवसृजन को बढ़ावा दिया है। वे आधुनिक हिंदी कविता की प्रगतिशील काव्यधारा के तीन स्तंभों में से एक थे। अन्य दोनों में नागार्जुन और शमशेर बहादुर सिंह को माना जाता है। उनके कवि कर्म की असली प्रयोगशाला उनके चारों ओर का जीवन है। परंपरा और आधुनिकता का उनमें एक अद्‌भुत समन्वय मिलता है। वे बाजारवाद के प्रबल विरोधी थे। अभिव्यक्ति के लिए सानेट जैसी विदेशी विधापर भी उन्होंने लेखन किया। हिंदी में लगभग 550 सानेट उन्होंने लिखे हैं तथा उनमें नए–नए प्रयोग भी किए हैं,जो दिगन्त में संकलित हैं। त्रिलोचन स्वयं को गांव के आदमी के साथ तथा गांव की समस्याओं के साथ जोड़ते हैं।

त्रिलोचन शास्त्री कविता, कहानी, सानेट, गजल आदि विधाओं के साथ–साथ पत्रकारिता के क्षेत्र में भी सक्रिय रहे हैं। आपने प्रभाकर, वानर, हंस, आज, समाज जैसी विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं का संपादन भी किया है।

**पुरस्कार–** हिंदी साहित्य की विविध विधाओं के विकास में उनका योगदान देखकर उन्हें सन 1989–90 में हिंदी अकादमी का 'शलाका सम्मान', हिंदी साहित्य में उत्कृष्ट योगदान के लिए 'शास्त्री' और 'साहित्य रत्न' जैसी



उपाधियों से सम्मानित किया गया, 1982 में 'ताप के ताए हुए दिन' के लिए उन्हें 'साहित्य अकादमी' का पुरस्कार, मध्य प्रदेश का मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, मध्य प्रदेश साहित्य परिषद का भवानीप्रसाद मिश्र राष्ट्रीय पुरस्कार, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का महात्मा गांधी सम्मान आदि विविध पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है।

**काव्यसंग्रह–** धरती(1945), गुलाब और बुलबुल(1956), दिगंत(1957), ताप के ताए हुए दिन(1980), शब्द(1980), उस जनपद का कवि हूँ(1981), अरघान(1984), तुम्हें सौंपता हूँ(1985), अनकही भी कुछ कहनी है(1985), अमोला(1990), मेरा घर(2002), जीने की कला(2004) आदि उनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं।

**कहानी संग्रह–** देशकाल(1986), सबका अपना–अपना अकाश।

**डायरी–** रोजनामचा(1992)

**समीक्षा ग्रंथ–** काव्य और अर्थबोध(1995)

**संपादन–** मुक्तिबोध की कविताएँ(1991)

**'चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती'** यह कविता 'धरती' काव्य संग्रह से ली गई है। कवि के काव्य की मुख्य विशेषता जीवन के प्रति रागात्मक आग्रह है। इसीलिए उनका काव्य भावात्मक रूप से उच्च कोटि का माना जाता है। त्रिलोचन ने अपनी कविता के लिए कोई नई भाषा नही गढ़ी बल्कि पहले से मौजूद जीवित भाषा को उसकी जीवंतता के साथ ग्रहण किया है। उस भाषा में उन लोगों को अपने आप बोलने दिया है, जिसको अभी तक बोलने का मौका नहीं मिला था। 'चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती' इसी तरह का उनका पहला प्रयास है।

यह कविता सन 1940–41 के आसपास की है। इसमें चंपा स्वयं बोलती है। वह चंपा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती और उसे बड़ा आश्चर्य होता है कि इन काले काले चिन्हों से कैसे यह सभी स्वर निकलते हैं। कविता में आयी हुई यह पंक्ति कि चंपा पढ़ लेना अच्छा है यह सृजनात्मकता की ओर संकेत करती है। इस कविता की भाषा खड़ीबोली है लेकिन उसमें 'अच्छर' अक्षर नहीं हुआ, न 'बजर' वज्र हुआ है और 'चीन्हती' क्रिया भी अपनी सहजता के साथ आयी है। वाक्य–विन्यास गद्य का होकर भी उसमें लय अंतर्निहित है। चंपा के लहजे में गंवई गांव के एक बे पढ़े–लिखे आदमी की स्वाभाविक, सहजता और प्रामाणिकता है। इस कविता के माध्यम से कवि ने शहर के विरुद्ध गांव, पैसे के खिलाफ इंसानी रिश्तों को चित्रित किया है।



Scanned by CamScanner

## चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती

चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती
मैं जब पढ़ने लगता हूँ वह आ जाती है
खड़ी खड़ी चुपचाप सुना करती है
उसे बड़ा अचरज होता है–
इन काले चिन्हों से कैसे यह सब स्वर
निकला करते हैं

चम्पा सुंदर की लड़की है
सुंदर ग्वाला है : गायें–भैंसे रखता है
चम्पा चौपायों को लेकर
चरवाही करने जाती है
चम्पा अच्छी है
चंचल है
नटखट भी है
कभी–कभी ऊधम करती है
कभी–कभी वह कलम चुरा देती है
जैसे तैसे उसे ढूँढकर जब लाता हूँ
पाता हूँ– अब कागज गायब
परेशान फिर हो जाता हूँ

चम्पा कहती है–
तुम कागद ही गोदा करते हो दिनभर
क्या यह काम बहुत अच्छा है
यह सुनकर मैं हँस देता हूँ
फिर चम्पा चुप हो जाती है
उस दिन चम्पा आई, मैंने कहा कि
चम्पा, तुम भी पढ़ लो
हारे गाढे काम सरेगा
गाँधी बाबा की इच्छा है–
सब जन पढ़ना–लिखना सीखें

चम्पा ने यह कहा कि
मैं तो नहीं पढ़ूँगी



तुम तो कहते थे गाँधी बाबा अच्छे हैं
वे पढ़ने–लिखने की कैसे बात कहेंगे
मैं तो नहीं पढ़ूँगी

मैंने कहा कि चम्पा, पढ़ लेना अच्छा है
ब्याह तुम्हारा होगा, तुम गौने जाओगी,
कुछ दिन बालम सँग साथ रह चला जाएगा जब कलकत्ता
बड़ी दूर है वह कलकत्ता
कैसे उसे सँदेसा दोगी
कैसे उसके पत्र पढ़ोगी
चम्पा पढ़ लेना अच्छा है !

चम्पा बोली– तुम कितने झूठे हो, देखा,
हाय राम, तुम पढ़–लिखकर इतने झूठे हो
मैं तो ब्याह कभी न करूँगी
और कहीं जो ब्याह हो गया
तो मैं अपने बालम को सँग साथ रखूँगी
कलकत्ता मैं कभी न जाने दूँगी
कलकत्ते पर बजर गिरे।

■■■



Scanned by CamScanner

# 7. रमणिका गुप्ता

देश में दलित चेतना को संपूर्णता के साथ अपनी रचनाओं में समेटने के लिए यदि किसी एक रचनाकार का नाम लिया जाए तो निश्चित ही हिंदी अपने लिए रमणिका गुप्ता का चयन करेगी। आधुनिक हिंदी साहित्य में विशेषकर दलित साहित्य की एक सशक्त जुझारू लेखिका रमणिका गुप्ता का जन्म 22 अप्रैल 1930 में झारखंड के छोटा नागपुर में एक संपन्न परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम डॉ. प्यारेलाल और माता का नाम लीलावती बेदी है। माता–पिता अपनी बेटी को प्यार से रमना कहकर पुकारते थे। पिता पटियाला रियासत के फौज में कर्नल के पद पर कार्यरत थे, तो माता एक विदुषी, कलाप्रिय और धर्मपरायण स्त्री थी। रमणिका गुप्ता ने अपने परिवार के विरोध के बावजूद श्री वेदप्रकाश गुप्ता के साथ 27 नवंबर 1948 को विवाह किया।

रमणिका गुप्ता का स्वभाव बाल्यकाल से ही तेज तर्रार था। बचपन से ही वह समाज के दलितों, भूमिहीनों, स्त्रियों और मजदूरों के प्रति भावुक होने के कारण उनके अधिकार का पक्ष लेती रही है। रमणिका गुप्ता की शिक्षा एम. ए. बी.एड. तक पटियाला, पंजाब और लाहौर (आज का पाकिस्तान) में हुई। आप बचपन से ही सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन की विचारधारा से जुड़ी हुई है। जब वह पांचवीं–छठी कक्षा में थी तब से 'सत्यार्थ प्रकाश' के समर्थन में मूर्ति पूजा के विरोध में वाद–विवाद करती रही है। इस वाद विवाद की चर्चा सुनकर विक्टोरिया स्कूल एवं कॉलेज पटियाला की प्रधानाचार्या मिस सेन की डांट भी उन्हें खानी पड़ी थी। किशोरावस्था से ही उन्होंने खादी पहनना आरंभ किया था।

रमणिका गुप्ता को सकारात्मक और विकासवादी परिवर्तन के साथ जुड़ी रहने से कई बार परिवार तथा बाहरी विरोध को सहना पड़ा लेकिन वह हमेशा अपनी जिद्द पर अड़ी रही और उसे सफलताएं भी मिलती गई। अपने स्वभाव को लेकर उन्होंने स्वयं कहा है कि "जिद अगर मुझमें नहीं होती, तो संभवतः मैं कहीं गृहिणी बनी रोटियां पका पकाकर आठ–दस बच्चों को खिलाकर संतुष्ट रही होती।" जुझारू, धैर्यवान, जिद्दी, निडरता, मेहनती, समता की पक्षधर, प्रगतिवादी दृष्टिकोण, परंपरा से अलिप्त आदि उनके व्यक्तित्व की विशेषताएं हैं।

रमणिका जी ने विगत बीस– तीस वर्षों में से हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अनेक भाषाओं में लिखित दलित



और स्त्री विषयक साहित्य को उन्होंने न केवल पाठकों के बीच लाया बल्कि उसे साहित्य के केंद्र में स्थापित करने का प्रयास भी किया है। आप बिहार तथा झारखंड की पूर्व विधायक एवं विधान परिषद की पूर्व सदस्या भी रही है। कई गैर सरकारी एवं स्वयंसेवी संस्थाओं से संबंध तथा सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में आप हमेशा सक्रिय रही है। आदिवासी तथा दलित महिलाओं और बच्चों के लिए कार्यरत रहते हुए आपने कई देशों की यात्राएं भी की है। एक कुशल संपादक लेखक कवि समाजसेविका कथाकार और आलोचक के रूप में रमणिका जी ने दलित और सर्वहारा समाज को एक अलग पहचान देने का प्रयास किया है।

**पुरस्कार–** रमणिका जी के सामाजिक और साहित्यिक योगदान को देखकर उन्हें महात्मा ज्योतिबा फुले विद्यावाचस्पति अलंकरण, साहित्य सरस्वती सम्मानोपाधि, अंबेडकर चेतना सम्मान, मध्य प्रदेश दलित साहित्य अकादमी का विशिष्ट पुरस्कार (गैर दलित वर्ग) आदि विविध पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है।

**काव्यसंग्रह–** गीत अगीत (1962), अब और तब(1968), खूंटे(1980), आम आदमी के लिए(1982), पूर्वांचल एक कविता यात्रा(1985), प्रकृति युद्धरत है(1987), कैसे करोगे बटवारा इतिहास का(1992), विज्ञापन बनता कवि(1996), आदिम से आदमी तक(1997), भला मैं कैसे मरती(1997), अब मूरख नहीं बनेंगे हम(1997), तुम कौन(1999), मैं आजाद हुई हूँ (1999), तिल तिल नूतन(1999), भीड़ सतार में चलने लगी(2000)।

**उपन्यास–** सीता(1996), मौसी(1997)।

**कहानी संग्रह–** बहु जुठाई(1998)।

**गजल–** नया मिजाज

**आत्मकथा–** हद्से

**समीक्षात्मक–** राष्ट्रीय एकता और विघटन के बीज, असम नरसंहार एक रपट, दलित वाम के कटघरे और दलित साहित्य, दलित चेतना साहित्य, दलित चेतना सोच, दलित सपनों का भारत।

**'जंगल का संघर्ष'** में रमणिका गुप्ता ने आदिवासियों के संघर्ष की तथा उनकी एकता एवं प्राकृतिक प्रेम को अभिव्यक्त किया है। हमने सभ्य बनने की होड़ में सरकार के साथ मिलकर जंगलों का नाश किया। किंतु आदिवासियों ने जंगल के प्रति अपना प्रेम और सद्भाव बनाए रखा। जब भी जंगल पर आक्रमण होने लगा तब आदिवासी सजग हो ,सरकार एवं अन्य लोगों से लड़ाई लड़ने लगा।वनों या जंगलों से आदिवासियों का बहुत गहरा रिश्ता है– जब से सृष्टि है तबसे। स्वयं आदिवासी शब्द की अवधारणा, उनकी अस्मिता और अस्तित्व जंगलों से परिभाषित होता है। वे स्वयं को जंगलों का प्राकृतिक संरक्षक मानते हैं। जंगलों, नदियों, पहाड़ों को वे अपना पुरखा और संबंधी



Scanned by CamScanner

## जंगल का संघर्ष

सितम्बर था
सन उन्नीस सौ अडसट का।
जंगल के
आदिवासी – वनवासी को
नारा दिया था हमने
'घूस नहीं अब घूँसा देंगे'
सूत्र दिया था हमने
'लाठा, छावन और जलावन
मुफ्त में सबको देना होगा'
मंत्र दिया था हमने
'जो जोते हैं जंगल–जमीन
उनको कब्जा देना होगा'
सपना दिया था हमने !
जंगल के सिपाही का जंगल में
आना–जाना बन्द हुआ
रेंजर और फॉरेस्टर का
राउंड लगाना बंद हुआ
शुरू हुआ आठ दिनों का
जेल भरो अभियान
गाँव–गाँव में गूँज उठी
'जेल चलो' की तान
जंगल का मन
जन–जन का मन
मर मिटने के उध्दत
आदिवासियों का अद्‌भुत था जुटान !
हजारीबाग के झेंप गये सदान
चप्पे–चप्पे में फैले तीर–कमान
माण्डू में लगे मक्का के ढेर
सुबह – शाम सत्याग्रहियों का मेल
सोमवार 'राहो'
मंगल को 'पचमों'



Scanned by CamScanner

बुधवार 'करमा'
जुमेरात 'रतवै'
शनिवार को पूरे जिले का रेला
'जेल–भरो' अभियान का अद्‌भुत था मेला
'जोडरा' का दर्रा खा–खाकर
अड़े रहे जंगलों के वासी
सरकार झुकी, जमीने छूटीं
बुलन्द हुए मुकाबले
जंगल जुल्म के विरुद्ध
दमन की रफ्तार मंद
जुल्म के हथियारों की धार भोथरी
दलालों की दलीलें गुम
जन–जन ने अपनी ताकत देखी
एकता की शक्ति परखी !

■■■



Scanned by CamScanner

# 8. दुष्यंत कुमार

एक चर्चित गजलकार और हिंदी कविता को नया आयाम देनेवाले महत्वपूर्ण कवि दुष्यंत कुमार का जन्म 1 सितंबर 1933 को उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले के नवादा नामक गांव में हुआ। दुष्यंत कुमार के पिता का नाम श्री भगवत सहाय तथा माता का नाम श्रीमती रामकिशोरी था। जाति परंपरा में इनका परिवार 'भूमिधर ब्राह्मण' परिवार के रूप में जाना जाता है। दुष्यंत जी का विवाह हिंदू परंपराओं के अनुरूप सन 1949 ईस्वी में 18 वर्ष की आयु में श्री सूरजभान त्यागी की सुपुत्री राजेश्वरी जी के साथ हुआ था। दुष्यंत जी की प्रारंभिक शिक्षा नवादा, नजीबाबाद, मुजफ्फरनगर, नहटौर तथा चंदौसी में संपन्न हुई। उन्होंने आगे प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. तथा एम.ए. हिंदी की उपाधि प्राप्त की और उसके पश्चात कुछ समय के लिए आकाशवाणी भोपाल में सहायक निर्माता के रूप में कार्यरत भी रहे। डॉ.रामकुमार वर्मा, डॉ.धीरेंद्र वर्मा तथा डॉ. रसाल आदि को ये अपने गुरु के रूप में मानते हैं। हिंदी साहित्य जगत के मार्कंडेय, कमलेश्वर, अजीतकुमार तथा रविंद्रनाथ त्यागी जैसे महान हस्ताक्षर इनके सहपाठी रहे हैं। दुष्यंत कुमार जी अपने निजी जीवन में बहुत सहज और मनमौजी व्यक्ति थे। दुर्भाग्य से केवल 42 साल की अल्पायु में 29 दिसंबर 1975 की रात ढाई बजे इनका देहावसान हुआ।

दुष्यंत कुमार नई कविता के एक प्रसिद्ध हस्ताक्षर रहे हैं। वे हिंदी के उन साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने साहित्य की कविता, उपन्यास, नाटक आदि विविध विधाओं पर लेखनी चलाकर अपनी सृजनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया है। उनका संपूर्ण साहित्य मानव जीवन के विविध अनुभव का लेखा–जोखा है। उनका जीवन बड़ा विचित्र था उनके मन में किसी के प्रति कोई मेल नहीं रहता था। एक सफल व्यक्ति और कवि बनने की उनकी ललक थी जिसमें उन्होंने खुद को मिटा दिया। वे स्वयं को एक सामान्य व्यक्ति समझते थे। उन्होंने अपनी रचना 'जलते हुए वन का वसंत' में कहा है कि, ''मेरे पास कविताओं के मुखोटे नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्राएँ नहीं हैं और अजनबी शब्दों का लिबास नहीं है। मैं एक साधारण आदमी हूँ और इतिहास और सामाजिक स्थितियों के संदर्भ में, साधारण आदमी की पीड़ा, उत्तेजना, दबाव, अभाव और उसके संबंधों के उलझाओं को जीता और व्यक्त करता हूँ।'' उन्होंने अपनी प्रतिभा, कल्पना एवं भावुकता के बलबूते पर हिंदी गजल को एक नया चेहरा प्रदान किया। उनका



Scanned by CamScanner

लेखन संख्यात्मक दृष्टि से नहीं, तो गुणात्मक दृष्टि से पहचाना जाता है। उन्होंने गजल की रोमानी और श्रृंगारिकता की पहचान बदलकर उसमें मनुष्य के यथार्थ जीवन तथा उसकी पीड़ा को भर दिया है। उनकी कविताएँ स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है। अपनी कविताओं में उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विसंगतियों पर करारा प्रहार किया है। उनकी कविताओं में देशप्रेम की भावना, भ्रष्ट व्यवस्था, शोषण एवं अत्याचार का विरोध तथा आशावादी दृष्टिकोण दिखाई देता है।

दुष्यंत कुमार के काव्य में एक ओर भविष्य के प्रति आस्था दिखाई देती है, तो दूसरी ओर वर्तमान के प्रति संघर्ष की अनुभूतियों का चित्रण भी मिलता है। वे व्यक्तिगत आत्मपीड़ा के माध्यम से जनहित की भावना को अभिव्यक्त करते हैं। व्यक्तिगत पीड़ा, देशप्रेम की भावना, सामाजिक सरोकार, शोषण का विरोध, अत्याचार के खिलाफ चेतना, भ्रष्ट शासन व्यवस्थापर व्यंग्य, जन–जीवन का चित्रण आदि उनकी कविता एवं गजलों की विशेषताएं हैं। नई कविता के अनुकूल भाषा का प्रयोग उन्होंने किया है। अनुभूतियों की सार्थक अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने पुराणों से कई प्रतीकों को लिया है। दुष्यंत कुमार जी ने गजल के माध्यम से हिंदी और उर्दू के बीच एक सेतु बनाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। उनका 'साए में धूप' संग्रह प्रकाशित होने के बाद उसका हिंदी और उर्दू दोनों भाषाओं में स्वागत हुआ है।

दुष्यंत कुमार की कविता का दायरा अत्यंत व्यापक है। उन्होंने गजल को एक काव्य के रूप में चुना जिसके पीछे भी एक चेतना काम कर रही थी और वह चेतना थी हिंदी और उर्दू अपने–अपने सिंहासन से उतरकर आम आदमी के साथ जुड़ जाए। इसलिए उन्होंने कहा भी है कि, "मैं जिसे ओढ़ता–बिछाता हूँ, वो गजल आपको सुनाता हूं।" अपने चंचल स्वभाव ने उन्हें घुटन दबाव और समस्याओं के घेरे में तो डाल ही दिया परिणाम स्वरुप उनकी मनोभूमि पर कवि और व्यक्ति का संघर्ष अंत तक जारी रहा।

**रचनाएँ**

**कविता–** सूर्य का स्वागत (1957), आवाजों के घेरे (1963), जलते हुए वन का वसन्त, साये में धूप (1975) आदि।

**उपन्यास–** छोटे–छोटे सवाल (1964), आँगन में एक वृक्ष (1968), दुहरी जिंदगी (अप्रकाशित)।

**नाटक–** मन के कोणा (अप्रकाशित), और मसीहा मर गया (अप्रकाशित), एक कण्ठ विषपायी (काव्य–नाट्य)।

**'साये में धूप'** दुष्यंत कुमार जी की अंतिम रचना है जिसमें कुल 52 गजलें सम्मिलित हैं। इस गजल संग्रह ने उन्हें लोकप्रियता के शिखरपर पहुंचा दिया। इस संग्रह का नामकरण ही अपने आप में प्रतीकात्मक प्रतीत होता है।



इसमें दरख़्त भी है और उसका साया भी, फिर भी उसमें धूप लगती है। मुख्यतः यहाँ 'साया' व्यवस्था का प्रतीक बनकर आया है, तो 'धूप' अव्यवस्था तथा अशांति के माहौल को दर्शाती है। आज हम देखते हैं कि समाज, राजनीति, धर्म, शिक्षा आदि सभी क्षेत्रों का ढाँचा पूरी तरह से चरमरा गया है। चारों ओर लूटपाट, खून खराबा, धोखाधड़ी, भ्रष्टाचार, आनाचार, धार्मिक उन्माद, दूसरों के प्रति घृणा और अनैतिकता का बोलबाला है। ऐसे विषम माहौल में एक ईमानदार और कर्तव्य के प्रति प्रतिबद्ध रचनाकार की छटपटाहट और बेचैनी इस संग्रह में व्यक्त हुई है।

'साये में धूप' गजल संग्रह से ये गजलें ली गई हैं। गजल का कोई शीर्षक नहीं दिया जाता, अतः यहाँ भी उसे शीर्षक न देकर केवल गजल कह दिया गया है। गजल एक ऐसी विधा है जिसमें सभी शेर स्वयं में पूर्ण तथा स्वतंत्र होते हैं। उन्हें किसी क्रम–व्यवस्था के तहत पढ़े जाने की दरकार नहीं रहती। इसके बावजूद दो चीजें ऐसी हैं, जो इन शेरों को आपस में गूँथकर एक रचना की शक्ल देती हैं– एक, रूप के स्तरपर तुक का निर्वाह और दो, अंतर्वस्तु के स्तर पर मिजाज का निर्वाह। इस गजल में पहले शेर की दोनों पंक्तियों का तुक मिलता है और उसके बाद सभी शेरों की दूसरी पंक्ति में उस तुक का निर्वाह होता है। इस गजल में राजनीति और समाज में जो कुछ चल रहा है, उसे खारिज करने और विकल्प की तलाश को मान्यता देने का भाव प्रमुख बिंदु है।

पाठ्यक्रम की इस पहली गजल में पाँच शेर हैं जिसका केंद्रीय भाव है– राजनीति और समाज में जो कुछ चल रहा है, उसे खारिज करना और नए विकल्प की तलाश करना। कवि राजनीतिज्ञों के झूठे वायदों पर व्यंग्य करते हुए इस पहले शेर में कहता है कि नेताओं ने घोषणा की थी कि देश के हर घर को चिराग अर्थात् सुख–सुविधाएँ उपलब्ध करवाएँगे। आज स्थिति यह है कि शहरों में भी चिराग अर्थात् सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। नेताओं की घोषणाएँ कागजी हैं। दूसरे शेर में, कवि कहता है कि देश में अनेक संस्थाएँ हैं जो नागरिकों के कल्याण के लिए काम करती हैं। कवि उन्हें 'दरख्त' की संज्ञा देता है। इन दरख्तों के नीचे छाया मिलने की बजाय धूप मिलती है अर्थात् ये संस्थाएँ ही आम आदमी का शोषण करने लगी हैं। चारों तरफ भ्रष्टाचार फैला हुआ है। कवि इन सभी व्यवस्थाओं से दूर रहकर अपना जीवन बिताना चाहता है। ऐसे में आम व्यक्ति को निराशा होती है। यहाँ कवि ने आजाद भारत के कटु सत्य का वर्णन किया है। नेताओं के झूठे आश्वासन व संस्थाओं द्वारा आम आदमी के शोषण के उदाहरण आए दिन मिलते हैं।

आजादी के बाद नेताओं ने जनता को यह आश्वासन दिया था कि हर घर में सुख–सुविधाएँ उपलब्ध होंगी। आज स्थिति बेहद निराशाजनक है।



Scanned by CamScanner

# साये में धूप

(1)

कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।
यहाँ दरख्तों के साये में धूप लगती है,
चलो यहाँ से चलें और उम्र भर के लिए।
न हो कमीज तो पाँवों से पेट ढँक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब हैं, इस सफर के लिए।
खुदा नहीं, न सही, आदमी का ख्वाब सही,
कोई हसीन नजारा तो है नजर के लिए।
वे मुतमइन हैं कि पत्थर पिघल नहीं सकता,
मैं बेकरार हूँ आवाज में असर के लिए।
तेरा निजाम है सिल दे जुबान शायर को,
ये एहतियात जरुरी है इस बहर के लिए।
जिए तो अपने बगीचे में गुलमोहर के तले,
मरें तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए।

(2)

हो गई है पीर पर्वत–सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी,
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।
हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।
सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

■■■



Scanned by CamScanner

# 9. ओमप्रकाश वाल्मीकि

हिंदी साहित्य के अंतर्गत विविध रचनाओं में दलित साहित्य के माध्यम से लेखन करनेवाले मेधावी एवं चर्चित रचनाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का जन्म 30 जून 1950 को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर के बरला गांव में हुआ। इनके पिता का नाम छोटालाल, मां का नाम मुकुंदी देवी और पत्नी का नाम चंदा है, जो ग्रहणी है। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा बर्ला से प्रारंभ की और आगे की पढ़ाई देहरादून से की। उन्होंने हिंदी साहित्य में एम.ए. किया।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की कविताएं दलित चेतना को मुखर करती है। इनकी कविताओं में दलितों पर हो रहे अत्याचारों के प्रति आक्रोश व्यक्त हुआ है। कविताओं में जहां अतीत के प्रति गहरी संवेदना है, वहां वर्तमान की विषमतापूर्ण स्थितियों के प्रति गहनता एवं यथार्थता भी चित्रित हुई है। दलित कविता का आंतरिक भाव और दलित चेतना का व्यापक स्वरूप इनकी कविताओं में व्यक्त हुआ है। इन्होंने अपनी कविताओं में यथार्थता के साथ सामाजिक शोषण का विविध आयामों में चित्रण किया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी मानवीय मूल्यों के पक्षधर के रूप में हमारे सामने आते हैं। इनकी कविताएं सहज सरल और प्रभावी भाषा में अपने विचारों को व्यक्त करने में सक्षम है।

**रचनाएँ–** ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने कविता, कहानी, आत्मकथा, आलोचना, अनुवाद आदि विधाओं पर लेखन के साथ–साथ विविध पत्र पत्रिकाओं का संपादन कर हिंदी साहित्य के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जैसे –

**कविता संग्रह** – सदियों का सन्ताप, बस ! बहुत हो चुका।

**कहानी संग्रह–** सलाम, घुसपैठिए।

**आत्मकथा–** जूठन (विविध भाषाओं में अनुदित)।

**आलोचना–** दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, मुख्यधारा और दलित साहित्य।

**अनुवाद–** Why I am not a Hindu (KANCHAELLYYA) का हिंदी अनुवाद किया है।

**सम्पादन–** दलित हस्तक्षेप (रमणिका गुप्ता), प्रज्ञा साहित्य (अतिथि सम्पादन), तीसरा पक्ष (सलाहकार सम्पादन)

**अन्य–** सफाई देवता (समाजशास्त्रीय अध्ययन), लगभग 60 नाटकों में अभिनय एवं निर्देशन किया है, अनेक पाठ्यक्रमों में रचनाएं लगाई गई है, 1993



Scanned by CamScanner

के प्रथम हिंदी दलित लेखक साहित्य सम्मेलन नागपुर के अध्यक्ष, 2008 के 28 वें अस्मिता दर्श साहित्य सम्मेलन चंद्रपुर के अध्यक्ष रहे हैं।

**पुरस्कार–** 1903 का डॉक्टर अंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, 1905 का परिवेश सम्मान, 2001 का कथाक्रम सम्मान, 2004 का न्यू इंडिया बुक पुरस्कार, 2007 का आठवां विश्व हिंदी सम्मेलन और 2008 का न्यूयॉर्क, अमेरिका सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान। आदि विभिन्न पुरस्कारों से आप को सम्मानित किया गया है।

**'सदियों का संताप'** यह कविता ओमप्रकाश वाल्मीकि की दलित विषयक वैचारिक प्रग्लभता को व्यक्त करती है। हजारों साल से गुलामी की जंजीरों में जकड़ा दलित समाज शोषित,उपेक्षित एवं वंचित जीवन जीने के लिए बाध्य था। धर्म एवं समाज के ठेकेदारों ने उसे अछूत मान उसके साथ दुर्व्यवहार किया। नाना प्रकार की यातनाएं दी, जानवरों पर कम जुल्म होता होगा! उससे कई गुना अधिक दलितों ने जुल्म और अन्याय को सहा। बाबासाहब के बनाए गए संविधान के पश्चात ही दलितों को कानूनी तौर पर समानता का अधिकार प्राप्त हुआ। ऊंच–नीच का भेद कम हुआ या समाप्त हुआ। किंतु फिर भी दलितों के मन में सदियों का संताप है ,जो सदियों से घर कर बैठा है।

दलित संवेदना के सशक्त हस्ताक्षर, कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता 'सदियों का संताप' वैचारिक धरातल पर प्रग्लभ कविता है। अपनी इस कविता में कवि दलित समाज से प्रश्न पूछता है कि आखिर कब तक सदियों का संताप लेकर जीवन जीना है? सवर्णो द्वारा किए गए अन्याय एवं अत्याचार को लेकर अपने मन में उनके प्रति घृणा को कब तक बनाए रखना है? कवि के मन में सबके प्रति प्रेम आस्था और विश्वास है। इसी बलबूते पर वह सभी के साथ समानता की बात करता है। उनके अनुसार दलितों को भी स्वर्णो द्वारा किए गए अन्याय एवं अत्याचार को भूलकर नए सिरे से जीवन जीना चाहिए ताकि हम बेहतर जीवन जी सकें एवं तरक्की कर सके। इसीलिए अपने मन की घृणा को मिटाना चाहिए एवं सभी को गले लगाकर पुराने दिन भूलकर नए सिरे से जीवन जीना चाहिए। कवि समाज की उलझन को प्रेम से सुलझाना चाहता है। वह सशस्त्र क्रांति का हिमायती नहीं है। बल्कि वैचारिक क्रांति से वर्ण आधारित समाज व्यवस्था के स्थान पर प्रेम तथा आपसी सौहार्द युक्त वर्णविरहित,भेद विरहित समाज व्यवस्था का निर्माण कराना चाहता है।

इसीलिए कवि अपने समाज बंधुओं को सलाह देता है कि सवर्णो द्वारा किए गए अत्याचार, अन्याय, उत्पीड़न, शोषण आदि को भुलाकर उन्हें प्रेम पूर्वक गले लगाओ ताकि हमारी आनेवाली पीढ़ी बेहतर भविष्य देख सके। इस कविता के माध्यम से दिया गया यह संदेश न्यायप्रिय लगता है क्योंकि हमारे पूर्वज जो



शोषक और शोषित थे वे आज जीवित नहीं हैं। अब उनकी नस्लें ये भेद न करें। अतीत को भूलकर, संकीर्ण मानसिकता को त्यागकर, सवर्ण या ब्राह्मण भेद न करते हुए सबके साथ सबको समता एवं मानवता के साथ जीना चाहिए। क्योंकि यह एक प्रवृत्ति भी है, जो हर समाज में अब बड़े पैमाने में पनप रही है। प्रेम की धारा ही मनुष्य को मनुष्यता से जोड़ती है और 'सदियों का संताप' कविता भी इसी धारा को आगे बढ़ा रही है।



Scanned by CamScanner

## सदियों का संताप

दोस्तों,
बिता दिए हमने हजारों वर्ष
इस इन्तजार में
कि भयानक त्रासदी का युग
अधबनी इमारत के मलबे में
दबा दिया जाएगा किसी दिन
जहरीले पंजो समेत
फिर हम सब
एक जगह खड़े होकर
हथेलियों पर उतार सकेंगे
एक–एक सूर्य
जो हमारी रक्त शिराओं में
हजारों परमाणु क्षमताओं की ऊर्जा
समाहित करके
धरती को अभिशाप से मुक्त कराएगा
इसीलिए,
हमने अपनी समूची घृणा को
पारदर्शी पत्तों में लपेटकर
ठूंठे वृक्ष की नंगी टहनियों पर
टाँग दिया है
ताकि आनेवाले समय में
ताजे लहू से महकती सड़कों पर
नंगे पाँव दौड़ते
तख्त चेहरोंवाले साँवले बच्चे
देख सकें
कर सकें प्यार
दुश्मनों के बच्चों से
अतीत की गहनतम पीड़ा को भूलकर
हमने अपनी उंगलियों के किनारों पर
दुःस्वप्न की आँच को
असंख्य बार सहा है



ताजा चुभी फाँस की तरह
और,
अपने ही घरों में
संकीर्ण पतली गलियों में
कनमुनाती गन्दगी से
टखनों तक सने पाँव में
सुना है
दहाड़ की आवाजों को
किसी चीख की मानिंद
जो हजारों हृदय से
मस्तिष्क तक का सफर तय करने में
थककर सो गई है
दोस्तों,
इस चीख को जगाकर पूछो
कि अभी और कितने दिन
इसी तरह गुमसुम रहकर
सदियों का संताप सहना है !



Scanned by CamScanner

# 10. पुष्पा विवेक

दलित, पीड़ित की संचेतना को लेकर लिखनेवाली और समाज सुधार के लिए कार्यशील रहनेवाली नवोदित महिला कवियों में से पुष्पा विवेक जी का जन्म 23 मार्च 1957 में सदर बाजार पुरानी दिल्ली के एक शिक्षित परिवार में हुआ। आपके पिता का नाम पूरनचन्द और माता का नाम सुमित्रा देवी है। एयर इंडिया से अवकाश प्राप्त कर आपके पति आर.सी. विवेक साहित्य लेखन के साथ सामाजिक कार्यों में भी सक्रिय रहते हैं। पुष्पा जी स्नातक कक्षा तक शिक्षा प्राप्त कर हिंदी साहित्य की लेखिका, कवयित्री और सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में अनवरत कार्यशील रही है। विविध पत्र–पत्रिकाओं में दलित, महिला अत्याचार, दलित शोषण जैसे विषयों पर आपके लेख प्रकाशित हुए हैं। साथ ही साथ आप विविध दलित आंदोलनों में भी सक्रिय रही है।

पुष्पा विवेक जी 2016–17 में हुए दलित लेखक संघ की उपाध्यक्ष भी रही है, साथ ही साथ अखिल भारतीय लेखिका मंच की सदस्या के रूप में भी आपने अपना दायित्व निभाया है। विविध काव्य गोष्ठियों, सम्मेलनों में आपने अपनी कविताओं तथा आलेखों को प्रस्तुत किया है। आपके साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार को देखते हुए आपको हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा काव्य गोष्ठी में भागीदारी पुरस्कार, हिंदी काव्य गोष्ठी हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा नगद पुरस्कार, उर्दू साहित्य अकादमी द्वारा काव्य गोष्ठी पुरस्कार, मार्च 2019 का नागपुर का सम्बुध्द महिला मैत्री सम्मान तथा अंबेडकरवादी लेखक संघ द्वारा 2019 का सावित्रीबाई फुले सम्मान आदि विविध पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है।

**'औरत कमजोर नहीं'** इस कविता के माध्यम से पुष्पा विवेक जी ने नारी चेतना को जगाने का कार्य किया है। समाज में भले ही पुरुषों के अन्याय– अत्याचारों को सहते हुए दहेज के कारण चुपचाप जलनेवाली कई स्त्रियाँ हैं, तो कइयों ने पुरुषों के शक के अंधेरों में घुटन भरी जिंदगी जीना पसंद किया है। लेकिन कवयित्री के अनुसार औरत कमजोर नहीं, अगर वह खुद में चेतना जागृत कर लेती है, अगर वह संगठन की शक्ति का महत्व समझती है, अगर उसे बाबासाहब अम्बेडकर के संविधान के बारे में ज्ञान है, तो वह बड़ी से बड़ी मुश्किलों का सामना कर सकती है। किसी भी प्रकार के डर को उसे मन से निकाल फेंकना होगा। किसी भी प्रकार का डर इन्सान को



कमजोर बना देता है। डर इन्सान को अंधविश्वास और आडम्बर की ओर ले जाता है। निडरता मन में आत्मविश्वास पैदा करती है और यही निडरता आज की नारी प्राप्त कर चुकी है।

पुष्पा विवेक स्वयं नारी आंदोलन के साथ जुड़ी रहने के कारण उसको स्वयं पर तथा आज की नारी पर पूर्णतः विश्वास है। उसके मन की नारी अपने में जगे आत्मविश्वास को लेकर कहती है कि जीवन की कई पथरीली राहों पर चलते हुए मैंने स्वयं को संभालना सीख लिया है। मैं कच्चे धागे में पीरोए उस लडियों के समान नहीं हूँ, जो टूटकर बिखर जाए। मैं रजनी, कांता, माधुरी जैसी आंदोलनकारी महिलाओं की प्रेरणा से प्रेरित हूँ जिससे मुझमें अन्याय–अत्याचार के खिलाफ लड़ने की क्षमता आ गई है। आज मैंने दहेज के अंगारों में जलकर भी सोने जैसी शुद्धता को प्राप्त किया है। पुरुषों के शक की आग में जलकर मैंने आज स्वयं को फौलाद जैसा मजबूत बनाया है। पुष्पा विवेक जी के अनुसार सदियों से पुरुष प्रधान संस्कृति में पिसती, शोषित, पीड़ित पुरुषी अत्याचारों को सहनेवाली नारी आज आधुनिक शिक्षा को प्राप्त कर तथा संविधान को आत्मसात कर बलवान बन चुकी है। उसमें किसी भी समस्या का सामना करने की क्षमता है।



Scanned by CamScanner

# औरत कमजोर नहीं

जीवन की पथरीली राहों पर
गिरकर संभलना सीख लिया है
औरत हूँ कच्चे धागे में पिरोई
कोई मोतियों की लड़ी नहीं
जो टूटकर बिखर जाऊँ
रजनी, कांता, माधुरी जैसी कड़ियों से
जुड़कर फौलादी मजबूती पाई है मैंने
दहेज के अंगारों में जलकर
सोने की शुद्धता पाई है मैंने
शक की आग में जली मगर
फौलादी मजबूती पाई है मैंने
समाज के इन ठेकेदारों से
जूझने की कसम खाई है मैंने
औरत हूँ, कच्चे धागे में पिरोई
कोई मोतियों की लड़ी नहीं
जो टूटकर बिखर जाऊँ

Scanned by CamScanner

# 11. डॉ. अमिता तिवारी

मूलतः भारतीय। मानवतावादी संवेदना को लेकर लिखनेवाली चर्चित लेखिका एवं कवयित्री अमिता तिवारी जी का जन्म सन 1964 में सुदूर हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से गाँव में हुआ। आप के पिता का नाम ठाकुरदास और माँ का नाम शकुंतला देवी है। छोटे से गांव से जीवन पथ का आरंभ होकर भी उच्चतर शिक्षा को आपने प्राप्त किया है। उच्चतर अध्ययन संस्थान शिमला से आपने पीएच.डी.की उपाधि प्राप्त की। कई शोध किए और फिर भारत भूमि से विदाई लेकर उत्तरी अमेरिका में बस गई। प्रवासी हुए एक दशक से अधिक हो चला लेकिन उनका दावा है कि वह कभी भी अपने देश की जड़ों से कटी नहीं। अकसर देखा जाता है कि इस भूमि से विदा होकर पुनः अपनी भूमि के साथ अपने मन को जुड़ाए रखना बडा मुश्किल होता है। मनुष्य जहां भी जाता है वहीं का बन जाता है, उसी रंग में रंग जाता है लेकिन कवयित्री डॉ.नमिता जी का मन हमेशा अपनी भारत भूमि, अपनी संस्कृति से जुड़ा रहा है। वह कहती है कि, मेरी हर धड़कन में भारत स्पंदित होते रहता है। साथ ही साथ अपनी सांस्कृतिक–धरोहर को संभालने–संवारने की ललक हमेशा मन में बनी रहती है। यहाँ तक कि भारत में फूल खिलते हैं, तो उसकी सुगंध महसूस कर लेती हूँ और कोई एकाध कली मुरझा जाती है, तो इतना भर तो कर ही पाती हूँ कि उस उदासी को कागज पर उतार लाऊं।

डॉ. अमिता जी के अनुसार आज भारत देश में ही नहीं विदेशों में भी हिन्दी– कविता प्रगति पथ पर है। उतार चढ़ाव तो आते ही रहते हैं लेकिन हिन्दी साहित्य में रत्न मणियों की श्रीवृधि निरंतर जारी है। सोशल मीडिया की भूमिका इस दृष्टि से तो निःसंदेह सराहनीय है। मूल चिंतन–विषय यही है कि कोई कहीं वंचित न रहे। नारी को लेकर उनका कहना है कि अपने देश में नारी को इंसान का दर्जा भर मिल जाए बाकी वो स्वयं संभाल लेने में समर्थ हैं। वह जननी है, तो वंचित क्यों रहे ? नयी नारी पीढी पर भरोसा है कि निःसंदेह नए क्षितिज को वह अपनाएगी और सुख–समृद्धिवाले विश्व को बनाने में अपना सहयोग देगी।

वर्तमान में डॉ. अमीता जी अपने शैक्षणिक–व्यस्तताओं के साथ–साथ स्थानीय विश्वविद्यालय में शोध–प्रोजेक्ट में भागेदारी निभा रही हैं। आप



Scanned by CamScanner

वाशिंगटन डी.सी. अमेरिका में भाषा तथा संस्कृति विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत हैं। काव्य–पठन मंचों पर उपस्थिति और ई–प्रकाशनों में छिटपुट प्रकाशन जारी रह पाता है। इसी में अपने जीवन का उत्कर्ष माननेवाली रचनाकार डॉ. अमिता जी का हिंदी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

**काव्य–संग्रह–** 'सम्बन्धों की सियासत', 'पहाड़ की पीड़ा', प्रवासी मनवा (प्रकाशनाधीन काव्य–संग्रह)।

**कहानी–संग्रह–** 'विपरीत ध्रुव', चलते चलते (प्रकाशनाधीन कहानी–संग्रह)।

**कविता पाठ–** दूरदर्शन केंद्र शिमला, जालंधर।
रेडियो केंद्र शिमला, जालंधर।

आप विदेश में रहकर भी भारतीय संस्कृति और साहित्य से जुड़कर अपना लेखन कार्य कर रही है। कहानी, कविता तथा कविता पाठ के अतिरिक्त आपके दर्जनों विषयों का ई प्रकाशन भी हुआ है।

**'युद्ध के विरुद्ध'** इस कविता में डॉ. अमिता तिवारी जी ने युद्ध की भयानकता को स्पष्ट करते हुए उसके परिणामों को प्रस्तुत किया है। कवयित्री के अनुसार न हारनेवाला देश हारता है, न जीतनेवाला देश जीतता है, बस युद्ध तो केवल शहीदों के सूने घरों पर ही बीतता है। यही इस कविता की मूल संवेदना है। कवयित्री ने इस कविता में भूमि को माता के रूप में भी प्रस्तुत किया है।

इस कविता में अमिता जी कहती हैं कि मैं युद्ध के विरुद्ध हूं इसलिए नहीं कि मुझे देश से प्यार नहीं है। बेसिकली मेरी धमनियों में भी रक्त खौलता है अपनी शहादत के ऊपर क्रोध भी आता है और बदले की भावना से मेरा मन सीमा की ओर दौड़ने लगता है। लेकिन मैं यह सोचती हूं कि यह धरती जननी है,जो रक्त को पचाती नहीं और गगन रुपी जनक को रणभेरी सुहाती नहीं। अमिता जी के अनुसार युद्ध में–

**"इधर रमेश गिरे अथवा उधर रहमान**
**मरती तो दोनों ओर केवल माएँ है।"**

अर्थात् माताओं को ही शहीद होना पड़ता है। युद्ध करनेवाले हो या युद्ध करानेवाले हो, हानि उनकी नहीं बल्कि निरापराध लोगों की होती है। युद्ध के पश्चात संधियाँ होती है, समझोते होते हैं और पूर्व स्थितियाँ बहाल भी की जाती है लेकिन बलिदानों का बलिदान किसी को याद नहीं आता। इसलिए अमिता जी युद्ध के विरुद्ध होने के अपने विचारों को इस कविता में व्यक्त करती है।



Scanned by CamScanner

## युद्ध के विरुद्ध

जी हाँ युद्ध के विरुद्ध हूँ मैं...
इसलिए नहीं कि
नहीं है देश से प्यार मुझे
अथवा कि अपनों के लिए मन नहीं डोलता है
मेरी धमनियों में भी रक्त है वह भी खौलता है
अपनों की शहादत पर बहुत क्रोध जागता है
मन जोश में सीमा की ओर भागता है
बदले की आग जलाती है
लेकिन
एक बात यह भी समझ में आती है
कि
धरित्री जननी है
रक्त नहीं पचाती
गगन जनक है रणभेरी नहीं सुहाती
और ये भी कि इधर रमेश गिरे अथवा उधर रहमान
मरती तो दोनों ओर केवल माएँ हैं
माएँ ही हैं, जो चुपचाप शहीद हो जाती हैं
जीती कौमें हारी कौमें
इस कोने में झाँक तक नहीं पाती हैं
बस जीत–हार के जश्न मनाती हैं
किसी के हाथ में आते हैं तमगे
किसी को मोटी रकमें मिल जाती हैं
बस केवल माएँ हैं, जो खाली हो जाती हैं
फिर फिर होती हैं पूर्वस्थिति बहाली की घोषणाएँ
फिर फिर फिर संधियाँ समझौते
किसे फिर याद रहती हैं किसी की वो मौतें
और
सोचना यह भी बाकी–
कि युद्ध कौन करते हैं ?
कि युद्ध कौन कराते हैं ?
बिल्लियों की बाँट में बंदर कहाँसे आते हैं
कौन है जो सारी रोटी ले जाते हैं ?
बिल्लियों के हाथ रीते क्यों हो जाते हैं ?
जी हाँ !! युद्ध के विरुद्ध हूँ मैं
क्योंकि
युद्ध में न हारा देश हारता है
युद्ध में न जीता देश जीतता है
युद्ध केवल शहीदों के सूने घरों पर बीतता है



Scanned by CamScanner

# 12. भुवनेश्वर उपाध्याय

भुवनेश्वर उपाध्याय भावनात्मक, वैचारिक, और अपनी बहुआयामी रचनात्मकता के लिए जाने जाते हैं जिसे उनकी आलोचनात्मक दृष्टि और विश्लेषण की क्षमता ने और व्यापकता प्रदान की है। भुवनेश्वर उपाध्याय का जन्म भिण्ड जिले के ग्राम बरहा में 08 फरवरी 1979 में हुआ। उनके पिता का नाम श्री ओंकारनाथ उपाध्याय और माता का नाम श्रीमती बिटोलीदेवी उपाध्याय है। वे पिता की शिक्षा विभाग की नौकरी और पारिवारिक कारणों की वजह से मात्र छह महीने की अवस्था में ही गाँव से नौ किलोमीटर दूर सेवढ़ा जिला दतिया (म.प्र.) आ गए थे। पिता का कहीं और स्थानंतरण न होने के कारण उनकी आरंभ से एम.ए. हिंदी तक की संपूर्ण शिक्षा–दीक्षा सेवढ़ा में ही हुई। बचपन से ही उच्चादर्शों, स्वाभिमान और फक्कड़पन को जीवनचर्या बनानेवाले भुवनेश्वर उपाध्याय अपने दोनों छोटे भाइयों से दस वर्ष से भी अधिक बड़े हैं। इसीलिए घर के बड़े पुत्र होने के कारण उनका विवाह यथाशीघ्र ही वर्ष 2001में श्रीमती विनीता उपाध्याय से हो गया था। दो पुत्रियों का पिता होने और बढ़ते पारिवारिक उत्तरदायित्वों का भी उनके लेखन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा, बल्कि सीमित संसाधनों का समुचित उपयोग करते हुए उनका समस्त परिवार सदैव सहयोगी बनकर उनके साथ खड़ा रहा।

भुवनेश्वर उपाध्याय की लेखकीय यात्रा दो दशकों से भी अधिक समय से निरंतर चल रही है। साहित्य के प्रति उनके पूर्ण समर्पण ने उन्हें नौकरी का बंधन स्वीकारने नहीं दिया, बल्कि एक संयमित जीवन की ओर अग्रसर कर दिया। वर्ष 1999 में उनकी कविता का अखबार में पहली बार प्रकाशन हुआ, जिसने उन्हें नियमित लिखने के लिए प्रेरित किया। उसके बाद विभिन्न अखबारों के कॉलमों, साहित्यिक पत्रिकाओं में व्यंग्य, कहानी, लेख, समीक्षाएँ आदि निरंतर प्रकाशित होने का जो सिलसिला शुरू हुआ वह आज भी अनवरत चल रहा है। जिससे उन्हें कवि, लेखक और बेबाक समीक्षक के रूप में स्वीकार किया जाने लगा और उनकी साहित्य के लिए प्रतिबद्धता और साधना रंग लाती गयी। फलस्वरूप लम्बे संघर्ष और उत्कृष्ट लेखन के पारितोषिक के रूप में उनका पहला पुस्तकाकार कविता संग्रह साहित्य अकादमी भोपाल के सहयोग से 2015 में प्राकाशित हुआ और चर्चित भी रहा। उसी का दूसरा संस्करण 2016 में आया। फरवरी 2020 तक उनके दो कविता संग्रह, दो



कहानी संग्रह, एक व्यंग्य संग्रह और चार उपन्यासों के अतिरिक्त एक संपादित संकलन भी प्रकाशित हो गए हैं।

भुवनेश्वर उपाध्याय का लेखन बहुआयामी, जनकल्याणकारी होने के साथ–साथ आम आदमी के मानसिक एवं भावनात्मक द्वंद्वों का भी लेखन है। उनके लेखन में विभिन्न विषयों पर उपलब्ध मनोवैज्ञानिक और वैचारिक विश्लेषण में वो सब ध्वनित होता है, जो मानवीय चेतना को झकझोरने का माद्दा रखता है और जीवन को बेहतर और सकारात्मक बनाने के लिए कुछ विकल्प भी सुझाता है। उनका तथ्य और तर्कों से युक्त वैचारिक विमर्श गरीब, मजदूर, कमजोर, शोषित, स्त्री, किन्नर आदि वर्गों की वास्तविकता का महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

**रचनाएँ**

**कविता संग्रह–** 'समझ के दायरे में' (दो संस्करण 2015, 16), 'दायरे में सिमटती धूप'

**कहानी संग्रह–** 'समय की टुकड़ियाँ', 'फिर वहीं से...'

**उपन्यास–** 'महाभारत के बाद', 'एक कम सौ', 'हॉफमैन', 'जुआ गढ़'

**व्यंग्य संग्रह–** 'बस फुँकारते रहिये'

**संपादित पुस्तक–** 'व्यंग्य–व्यंग्यकार और जो जरूरी है'

इन रचनाओं के साथ–साथ देश के विभिन्न स्तरीय समाचार पत्रों जैसे – नवभारत, दैनिक जागरण, न्यूज फोक्स, जनवाणी, नई दुनिया.....आदि में तथा इन्द्रप्रस्थ भारती, दोआवा, लमही, साक्षात्कार, अक्षर शिल्पी, वीणा, माटी, गोलकोण्डा दर्पण, अक्षरा, समकालीन साहित्य समाचार, सुसंभाव्य, लोकोदय, समीक्षा, गीत गागर, अभियान टुडे आदि पत्रिकाओं एवं विभिन्न साझा संकलनों में प्रकाशन भी हुआ है।

**'सड़क दर सड़क'** यह कविता 'समझ के दायरे में' कविता संग्रह से ली गई है। इस कविता में भुवनेश्वर उपाध्याय जी ने मजदूरों की आर्थिक दरिद्रता से उत्पन्न पीड़ा एवं व्यथा को प्रस्तुत किया है। यह कविता मजदूर विमर्श पर पाठकों को सोचने के लिए विवश करती है। कवि के अनुसार सड़क, केवल दो स्थानों को ही अपस में नहीं जोड़ती, बल्कि कम समय में आवागमन को सहज सुलभ बनाकर हर प्रकार के विकास का मार्ग प्रशस्त भी करती है। सड़कों के निर्माण के बाद मानव जीवन जितना सरल हो गया है उतना ही उसे विस्तार भी मिला है। व्यापार बढ़े, तो उच्च वर्ग और भी अमीर हो गया, किंतु इन सब विकास कार्यों के बीच एक वर्ग ऐसा ही रह गया जिसके जीवन में सड़क केवल रोटी जुटाने का माध्यम मात्र बनकर रह गई। वह उसकी उन्नति का साधन न बन सकी और न ही उसके जीवन को गति दे सकी। दुनिया मजदूरों को उसी रेत, सीमेंट या गिट्टी और मिट्टी में छोड़ आगे बढ़ गई। 'सड़क दर सड़क' कविता उन्हीं मजदूरों के जीवन के कठोर यथार्थ का जीवंत दस्तावेज है,



Scanned by CamScanner

जिसमें कवि ने उनके जीवन के विभिन्न व्यक्त–अव्यक्त पहलुओं को गहरे से छुआ है।

कवि कहता है कि सड़क दर सड़क मनुष्य के संपर्क का दायरा और भी विस्तृत होता जा रहा है। गाँव से शहर और शहरों से पूरा देश जुड़ रहा है। नित नवीन विकास की राहें खुलतीं जा रहीं हैं। चारों ओर प्रगति हो रही है और मनुष्य निरंतर सम्पन्नता की ओर बढ़ता जा रहा है, किंतु उन मजदूरों का कुछ नहीं होता, जो निरंतर सड़क निर्माण में अपना पसीना ही नहीं, बल्कि अपना संपूर्ण जीवन उसी निर्माणाधीन सड़क के आसपास ही गुजार देते हैं। कवि ऐसे एकपक्षीय विकास पर अपने शब्दों से प्रश्नचिन्ह लगाता है। वह कहता है कि इतनी कठोर और हाड़तोड़ मेहनत करने के बाद भी उन्हें एक खानाबदोश जीवन ही मिलता है। जहाँ न उनकी कोई निजता है और न भविष्य की नवीन संभावनाओं से भरी शिक्षा दीक्षा। कितनी विसंगतियों से भरी है ये दुनिया, एक ओर सुख संमृद्धि और दूसरी ओर रोटी के लिए संघर्ष।

कवि कहता है कि ये वो वर्ग है जहाँ रोटी के अतिरिक्त भूख मिटाने का कोई और विकल्प नहीं है। जो जैसा मिला खा लिया, जहाँ जगह मिली सो गए। और जब जागे तो फिर वही रेत, मिट्टी, सीमेंट या वही अधबनी सड़क और वही भूख। इनका जीवन इसी सड़क पर शुरू होता है और उसी पर संघर्ष करते–करते खत्म हो जाता है। यही इनकी दुनिया है। यहीं इनके बच्चे पैदा होते हैं, जो अधनंगे, हाथ में रोटी का टुकड़ा पकड़े अपने आप पल जाते हैं। इनके पास दूसरी दुनिया के बच्चों की तरह मँहगे खिलौने और पौष्टिक भोजन नहीं होता, रेत, गिट्टी और मिट्टी ही इनके खिलौने होते हैं और वही जीवन। कभी कुछ स्वप्न मन में उठते हैं और उसी अधबनी सड़क में मिल जाते हैं।

कवि आगे कहता है कि इनके न बचपन का पता चलता है और न जवानी का, इनके पास सिर्फ तीव्र भूख होती है, जो रोटी की जुगाड़ में इनकी उम्र खा जाती है। यह भूख सड़क दर सड़क बुढ़ापे तक अनवरत साथ चलती है, जो सूखी रोटी और चटनी से कभी नहीं मिटती, बल्कि और बढ़ती ही जाती है। इसी भूख को मिटाने में निरंतर चमचमाती सड़कें बनतीं जाती है। सब तरक्की करते हैं, किंतु इनके बनानेवाले उसी सड़क के किनारे अपने चूल्हे को जलाने के लिए ईंधन और पकाने के लिए अन्न को जुटाने में जिंदगी काट लेते हैं। भूख एक अनुत्तरित प्रश्न की तरह इनके समक्ष हर दिन आ खड़ी होती है। तब ये देश के कर्णधारों की तरफ कातर दृष्टि से इसी आशा में देखते हैं कि कोई उम्मीद की किरण इनके जीवन में भी रोशनी कर दे, किंतु वो सूर्य दूर आकाश में टिमटिमाकर अस्त हो जाता है और इनके जीवन की अंधेरी रात कभी खत्म ही नहीं होती। रोशनी इनके विपरीत कहीं और होती है और ये सड़क दर सड़क दूसरी तरफ भटकते रह जाते हैं।



Scanned by CamScanner

## सड़क दर सड़क

बढ़ता जाता है
सड़क दर सड़क
सम्पर्क का दायरा
जुड़ते जाते हैं,
गांव से शहर,
शहर से पूरा देश
बढ़ जाती हैं, विकास की राहें
होती है प्रगति
आती है संपन्नता
मगर !
कुछ नहीं होता उनका
जो बहाते हैं पसीना
बनाने में सड़कें
बदले में मिलती है जिसके
एक खानाबदोश जिंदगी उन्हें
खाकर सो गये जो मिला
जागे तो, फिर वहीं सड़क
सीमेन्ट, गिट्टी और रेत
यही जीवन है
जो खत्म हो जाता है
सड़क से शुरू होकर
सड़क पर ही
यहीं पैदा होते हैं इनके बच्चे
अधनंगे,
रेत में महलों के ख्वाब देखते
पलते हैं रोटी का टुकड़ा लिये
जिन्हें न बचपन का पता
न जवानी की खबर
यहीं आता है बुढ़ापा
भूख साथ चलती है जिंदगी भर
अनवरत बढ़ती है जो



Scanned by CamScanner

रोटी और चटनी से
बनती जाती हैं सड़कें
उम्र भर
रोटी जुटाने में
जलते हैं इनके चूल्हे
सड़क के किनारे
यहीं कटती है जिंदगी
इसी आशा में
शायद कोई किरण हो
इस अंधेरी रात के बाद।

■■■

Scanned by CamScanner